एल. लैण्डाव तथा यू. रूमर

आपेक्षिकता के सिद्धान्त

संहति • • • • काल मशीन • • • • एक तारे तक की यात्रा • • • • गति की तीव्रता • • • • लम्बाई का संकुचन

H
530.11
L 231 A

L 231 A

आपेक्षिकता के सिद्धान्त

(WHAT IS THE THEORY OF RELATIVITY)

मूल लेखक

एल० लैण्डाव तथा यू० रूमर

अनुवादक

डॉ० के० एल० अग्रवाल

मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी

आपेक्षिकता के सिद्धान्त

लैण्डाव तथा रूमर की ए० ज्दोर्निख द्वारा अनूदित तथा MIR Publishers, MOSCOW द्वारा प्रकाशित – WHAT IS THE THEORY OF RELATIVITY के १९७० के संस्करण का हिन्दी अनुवाद।

प्रकाशक :
मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी,
९७, मालवीयनगर, भोपाल-३

Library IIAS, Shimla
H 530.11 L 231 A
00043687

प्रथम संस्करण : १९७२ 1972

© मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल

मूल्य :
३ रुपये

मुद्रक :
विजय प्रिन्टर्स
२४, नमकमण्डी,
उज्जैन
फोन : ४८०

INDIAN INSTITUTE OF ADVANCED STUDY
Acc. No. 13687
Date 24.8.73
SIMLA

H
530.11
L231A

शिक्षा तथा समाज कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार की विश्वविद्यालय ग्रन्थ योजना के अन्तर्गत मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी द्वारा प्रकाशित

प्रस्तावना

आपेक्षिकता का सिद्धान्त अपेक्षाकृत नया है। फिर भी इसने समस्त प्रवुद्ध-जगत् को अपनी ओर आकृष्ट किया है। दार्शनिक क्षेत्र में जो क्रान्ति 'स्याद्‌वाद' या 'अनेकान्तवाद' ने की थी, वही क्रान्ति वैज्ञानिक जगत् में आपेक्षिकता के सिद्धान्त ने की है। कोई वस्तु निरपेक्ष नहीं है। उदाहरणार्थ- 'ऊपर' और 'नीचे' शब्द को ही लीजिए। क्या यह कल्पना निरपेक्ष है? जब मनुष्य यह नहीं जानता था कि पृथ्वी गोल है और यह मानता था कि वह रोटी के समान समतल है तब दिशा की ऊर्ध्वाधर कल्पना को निरपेक्ष माना जाता था। क्योंकि तब लोगों का यह विचार था कि पृथ्वी की सतह सभी स्थानों पर एक ही है। इसलिए 'ऊपर' तथा 'नीचे' शब्द का प्रयोग बिल्कुल स्वाभाविक था। जब यह खोज की गई कि पृथ्वी गोल है तब ऊपर और नीचे शब्द की कल्पना अर्थहीन हो गयी। जब तक पृथ्वी की सतह पर उस वस्तु को स्पष्ट न किया जाय, जहाँ से ऊपर और नीचे का निर्देश करना है, तब तक इस शब्द का कोई अर्थ न होगा। इसलिए कल का निरपेक्ष आज का सापेक्ष बन गया है। अब विश्व में कोई एक ऊर्ध्वाधर दिशा नहीं है। यही बात दिन और रात के विषय में भी कही जा सकती है। जब तक स्थान-विशेष का उल्लेख न किया जाय, तब तक इस शब्द का कोई महत्त्व नहीं। इस प्रकार दिन और रात सापेक्ष कल्पना है। विज्ञान के क्षेत्र में इस विचार ने बहुत क्रान्ति की है। भारत में जहाँ काल और दिशा का विवेचन है, वहाँ सर्वत्र आपेक्षिकता को दृष्टि में रखा गया है। किन्तु दार्शनिक दृष्टि से होने वाले इस विवेचन का प्रभाव व्यावहारिक क्षेत्र में इसलिए अधिक नहीं देखा जा सका कि भारत में आधुनिक विज्ञान का विकास उस काल में नहीं हो पाया था।

अंग्रेजी में 'आपेक्षिकता के सिद्धान्त' पर दर्जनों ग्रन्थ ,उपलब्ध हैं क्योंकि भौतिकी का कोई विद्यार्थी बिना इस मूल सिद्धान्तों को समझे एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सकता ।

श्री एल० लैण्डाव तथा यू० रूमर की मूल रूसी पुस्तक 'थ्योरी आफ रिलेटिविटी' रूस में तो लोकप्रिय हुई ही, उसका अंग्रेजी अनुवाद भी पर्याप्त लोकप्रिय हुआ । इस पुस्तक में लेखक ने अत्यन्त सरल भाषा में आपेक्षिकता के सिद्धान्तों का विवेचन किया है, जिसे थोड़ी सी जागरूकता के साथ पढ़ने पर न केवल विज्ञान के विद्यार्थी अपितु सामान्य पाठक भी हृदयंगम कर सकते हैं । लघु-काय पुस्तक की इस विशेषता को ध्यान में रखते हुए अकादमी ने इसका हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत करना उपयुक्त समझा । अनुवाद की भाषा सीधी-सादी और सरल है ?

आशा है, इस पुस्तक का हिन्दी जगत में समुचित स्वागत होगा

प्रभुदयालु अग्निहोत्री

–(डा०) प्रभुदयालु अग्निहोत्री,
संचालक,
मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी

भोपाल
दिनांक ९ मार्च, ७२

विषय-सूची

●

प्रस्तावना ३–४

प्रथम खण्ड

आपेक्षिकता जिसके कि हम अभ्यस्त हैं ९–१५

क्या प्रत्येक दृढ़ कथन का कुछ अर्थ है ?

दाँयें अथवा बाँयें ?

अभी दिन है अथवा रात ?

अधिक बड़ा कौन है ?

सापेक्ष निरपेक्ष प्रतीत होता है

निरपेक्ष सापेक्ष प्रतीत होता है

व्यावहारिक ज्ञान विरोध करता है

द्वितीय खण्ड

आकाश सापेक्ष है १६–२६

वही स्थान है या नहीं ?
(पिण्ड) वास्तव में कैसे चलता है ?
पत्थर ने वास्तव में किस मार्ग से यात्रा की ?
क्या दृश्य लेने के समस्त स्थान तुल्य हैं ?
विराम की स्थिति मिल गई !
जड़त्वीय फ्रेम
क्या रेलगाड़ी गतिशील है ?
विराम की स्थिति सदा के लिए खो गई
जड़त्व का नियम
वेग भी सापेक्ष है !

तृतीय खण्ड

प्रकाश (की त्रासदी) २७–३७

प्रकाश संचरण तात्क्षणिक नहीं है
क्या प्रकाश का वेग बदला जा सकता है ?
प्रकाश और ध्वनि
गति की आपेक्षिकता का नियम डिगता हुआ प्रतीत होता है
विश्व-ईथर
कठिन परिस्थिति
प्रयोग के द्वारा इसका निर्णय हो
आपेक्षिकता के नियम की विजय होती है
कुएँ से निकल कर खाई में ?

चतुर्थ खण्ड

काल सापेक्ष है ! ३८–४६

क्या इसमें वास्तव में कोई विरोधाभास है ?
रेलगाड़ी पर सवारी ?
'व्यावहारिक ज्ञान' का निरादर होता है

काल की स्थिति भी आकाश जैसी है
विज्ञान की विजय होती है
वेग की स्वयं की सीमाएँ हैं
पहिले और बाद में

पंचम खण्ड

मनमौजी घड़ियाँ और पैमाने (स्केल) ५०–६५

हम पुनः रेलगाड़ी पर सवार होते हैं
फिर कारण क्या है ?
घड़ियों का विरोधाभास
काल-मशीन
एक तारे तक की यात्रा
लम्बाई का संकुचन
मनमौजी चालें

षष्ठ खण्ड

संहति ६६–७०

संहति
बढ़ती हुई संहति
एक ग्राम प्रकाश का मूल्य क्या है ?
लेकिन प्रकाश का मूल्य क्या होगा ?

उपसंहार ७१–७४

प्रथम खण्ड

आपेक्षिकता जिसके कि हम अभ्यस्त हैं

क्या प्रत्येक दृढ़ कथन का कुछ अर्थ है ?

स्पष्टत: नहीं। हम भले ही कुछ शब्दों को व्याकरण के द्वारा नियत नियमों के अनुसार जोड़ कर रख दें, लेकिन फिर भी इस प्रकार बनने वाला वाक्य बिलकुल निरर्थक हो सकता है। उदाहरणार्थ इस कथन का कुछ भी अर्थ नहीं है कि 'पानी तिकोना होता है'।

फिर भी सारी असंगत बातें इतनी स्पष्ट नहीं रहती है। बहुधा कोई कथन जो सरसरी दृष्टि से देखने में बिलकुल उचित मालूम होता है, बारीकी से जाँच करने पर बिलकुल निरर्थक सिद्ध होता है।

दाँये अथवा बाँये ?

एक विशिष्ट मकान रास्ते के किस तरफ है–दाँये अथवा बाँये ? इस प्रश्न का उत्तर आप संभवत: एकाएक नहीं दे सकेंगे।

यदि आप पुल पर से जंगल की ओर जायें, तो वह आपके बाँये हाथ की ओर होगा और यदि आप विपरीत दिशा में चलें तो वह आपके दाँयी ओर होगा। (चित्र १) गली के बाँये अथवा दाँये ओर बताते समय आपको सम्बन्धित दिशा भी बतानी पड़ेगी।

किसी नदी के दाँये किनारे के विषय में चर्चा करना बिलकुल ठीक है, क्योंकि उसकी धारा के प्रवाह से दिशा निश्चित हो जाती है। इसी प्रकार हम कह सकते हैं कि एक मोटर सड़क के दाँये हाथ की तरफ जा रही है, क्योंकि

उस सड़क पर से गुजरने वाले यातायात का प्रवाह सम्बन्धित दिशा सूचित कर देता है।

इसलिये संकल्पनायें 'दांये' तथा 'बांये' सापेक्ष हैं और इनसे अर्थ केवल तब ही निकलता है जब इन्हें समझने के लिये हमें कोई दिशा निश्चित कर दी जाये।

अभी दिन है अथवा रात ?

इस प्रश्न का उत्तर उस स्थान की स्थिति पर निर्भर करेगा। जब **भारतवर्ष** में दिन होता है, तब **अमेरिका** में रात होती है। इसमें कोई विरोधा-

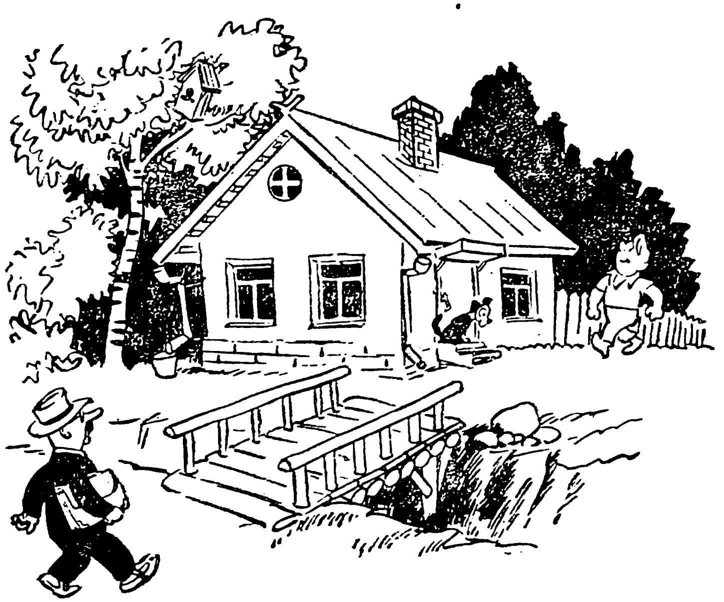

चित्र १

नहीं है। केवल 'दिन' और 'रात' सापेक्ष संकल्पनायें हैं और स्थान का उल्लेख भास किये बिना आप इस प्रश्न का उत्तर नहीं दे सकते।

अधिक बड़ा कौन है ?

चित्र २ में स्पष्टतया ग्वाला गाय से अधिक बड़ा है। चित्र ३ में गाय

ग्वाले से अधिक बड़ी है। दोनों कथन आपस में बेमेल नहीं हैं। ये दोनों चित्र दो भिन्न-भिन्न स्थानों से खींचे गये हैं।

एक स्थान गाय के अधिक समीप था और दूसरा ग्वाले के। किसी वस्तु के चित्र को बनाने के लिए उसकी सही विमितियाँ (Dimensions) मालूम होना आवश्यक नहीं है बल्कि इसके लिये वह कोण मालूम होना चाहिये जिससे उसको देखा गया है। वस्तुओं की ये कोणीय विमितियाँ स्पष्टतया सापेक्ष हैं। वस्तुओं की कोणीय विमितियों के विषय में कुछ भी कहना तब तक निरर्थक है, जब तक कि वस्तु का स्थान आकाश (Space) में निश्चित न कर दिया जाये। उदाहरण के लिये इस कथन का कुछ भी अर्थ नहीं है कि एक मीनार को ४५° के कोण से देखा गया। लेकिन यदि आप यह कहें कि एक मीनार को, जो आपसे १५ मीटर की दूरी पर है आपने ४५° के कोण से देखा, तो यह कथन बिलकुल उचित होगा। इस कथन से यह भी ज्ञात होता है कि मीनार १५ मीटर उँची है।

चित्र २

सापेक्ष निरपेक्ष प्रतीत होता है।

यदि हम अपने निरीक्षण-स्थल को थोड़ा सा हटा लें तो कोणीय आकार भी थोड़े से बदल जायेंगे। यही कारण है कि खगोल-विज्ञान में कोणीय मापों का ही उपयोग किया जाता है। तारकीय (Stellats) नक्शों में तारों के बीच

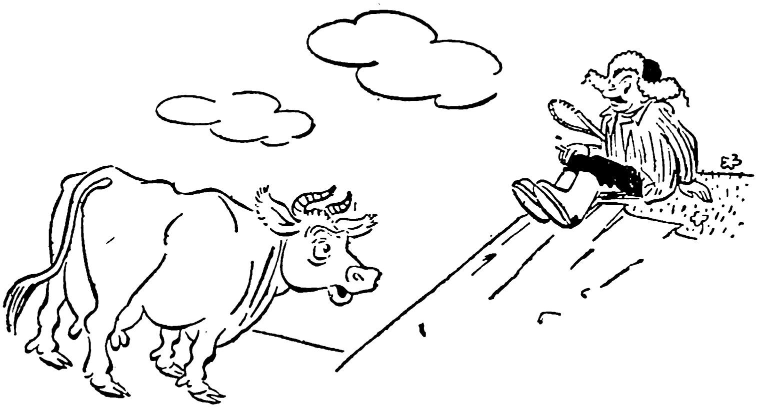

चित्र ३

की कोणीय-दूरी दी रहती है, अर्थात ऐसे कोण दिये रहते है जिनसे तारों की बीच की दूरी पृथ्वी से दिखायी देती है।

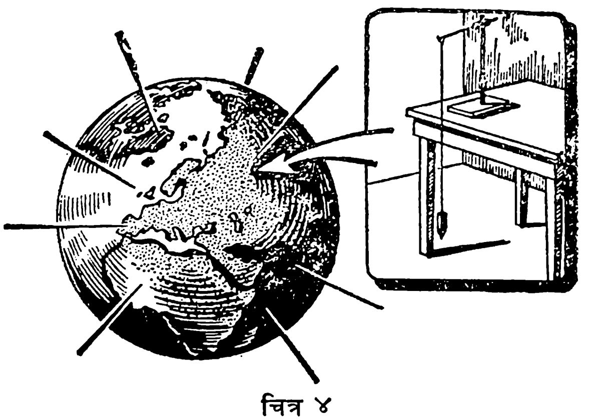

चित्र ४

हम पृथ्वी पर कहीं भी चले जायें और किसी भी स्थान से निरीक्षण करें, हमें तारे हमेशा परस्पर एक-दूसरे से उसी दूरी पर दिखायी देंगे। ऐसा इसलिये दिखायी देता है क्योंकि तारे हमसे इतनी अधिक दूरी पर हैं, जिसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। इन दूरियों की तुलना में पृथ्वी पर हमारी एक स्थान से दूसरे स्थान पर आने-जाने की दूरी इतनी नगण्य है कि हम इसकी सरलता से उपेक्षा कर सकते हैं। इसलिये ऐसी दशा में हम कोणीय-दूरियों को

निरपेक्ष दूरियाँ मान सकते हैं। यदि हम सूर्य के चारों ओर पृथ्वी की परिक्रमा पर भी विचार करें, तो कोणीय मापों में परिवर्तन दिखायी देने लगता है, यद्यपि यह परिवर्तन भी नगण्य ही होता है। लेकिन यदि हम अपने निरीक्षण-स्थल को हटाकर किसी तारे पर ले जायें – उदाहरणार्थ लुब्धक (Sirius) नामक तारे पर ले जायें तो दृष्य एकदम बदल जायेगा। सारे कोणीय मापों में अन्तर आ जायेगा और हमें वे तारे परस्पर पास-पास दिखाई देने लगेंगे जो कि हमें पृथ्वी से परस्पर दूर-दूर दिखाई देते थे तथा इसकी विपरीत स्थिति भी दिखाई देगी।

निरपेक्ष सापेक्ष प्रतीत होता है

हम बहुधा 'ऊपर' और 'नीचे' शब्दों का प्रयोग करते हैं। क्या ये संकल्पनाएँ निरपेक्ष हैं अथवा सापेक्ष ?

भिन्न-भिन्न युगों में मनुष्यों ने इस प्रश्न के भिन्न-भिन्न उत्तर दिये। जब मनुष्य यह नहीं जानते थे कि हमारी पृथ्वी गोल है और कल्पना करते थे कि वह रोटी के समान समतल है तब ऊर्ध्वाधर (Vertical) दिशा को एक निरपेक्ष संकल्पना माना जाता था। यह माना जाता था कि ऊर्ध्वाधर दिशा पृथ्वी की सतह पर सभी स्थानों पर एक ही है और इस कारण निरपेक्ष 'ऊपर' तथा निरपेक्ष 'नीचे' कहना बिलकुल स्वाभाविक था।

जब यह खोज की गयी कि पृथ्वी गोल है, तब 'ऊर्ध्वाधर' की संकल्पना धराशायी हो गयी।

वास्तव में, पृथ्वी गोल होने के कारण, ऊर्ध्वाधर रेखा की दिशा आवश्यक-रूप से पृथ्वी की सतह पर उस बिन्दु की स्थिति पर निर्भर करती है, जहाँ से कि वह रेखा गुजरती है।

गोले के भिन्न-भिन्न बिन्दुओं पर ऊर्ध्वाधर दिशा भी भिन्न-भिन्न होगी।

चूंकि 'ऊपर' तथा 'नीचे' की संकल्पनाएँ तब तक अर्थहीन होती है, जब तक कि पृथ्वी की सतह पर उस बिन्दु की स्थिति निर्दिष्ट न की जाये, इसलिये निरपेक्ष सापेक्ष हो जाता है। इस विश्व (Universe) में कोई एक ऊर्ध्वाधर

दिशा नहीं है। इसलिये आकाश (Space) में किसी भी दिशा के लिये हम पृथ्वी की सतह पर वह बिन्दु निश्चित कर सकते हैं जहाँ यह दिशा ऊर्ध्वाधर होगी।

व्यावहारिक ज्ञान विरोध करता है

आज यह सब हमें स्पष्ट दिखाई देता है और हम इसमें जरा भी शंका नहीं करते। फिर भी हमें इतिहास से ज्ञात होता है कि मनुष्यों को 'ऊपर' तथा 'नीचे' की सापेक्षता को समझ लेना सरल नहीं मालूम पड़ता था। मनुष्यों का झुकाव उन संकल्पनाओं को निरपेक्ष मान लेने की ओर रहता है, जिनकी सापेक्षता उनको प्रतिदिन के अनुभवों से स्पष्ट नहीं होती (जैसा कि 'दाँये' तथा 'बाँये' के विषय में)।

पृथ्वी गोल है – इस तथ्य के विरुद्ध जो अनर्गल आपत्ति मध्यकालीन युग से आज तक उठाई जाती रही है, वह यह है कि मनुष्य उल्टा होकर कैसे चल सकते हैं ?

यह तर्क गलत है, क्योंकि ऐसा कहते समय हम ऊर्ध्वाधर दिशा की सापेक्षता की अनदेखी करते हैं, जो पृथ्वी गोल होने के कारण स्थापित हुई।

यदि हम ऊर्ध्वाधर दिशा की सापेक्षता को न मानें और उदाहरणार्थ **देहली** में उसे निरपेक्ष मान लें, तो स्वाभाविक है कि **न्यूयार्क** में मनुष्य उलटे ही चल रहे होंगे। लेकिन यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि न्यूयार्क-निवासियों के दृष्टिकोण से हम देहली-वासी लोग उलटे चल रहे हैं। इसमें कुछ भी विरोधाभास नहीं है क्योंकि ऊर्ध्वाधर दिशा वास्तव में एक निरपेक्ष संकल्पना नहीं है बल्कि सापेक्ष है।

ऊर्ध्वाधर दिशाओं की सापेक्षता का सही अर्थ हमें केवल तब ही अनुभव होता है जब हम पृथ्वी की सतह पर ऐसे दो बिन्दुओं पर विचार करें जो परस्पर बहुत अधिक दूरी पर हों– जैसे **देहली** और **न्यूयार्क**। दूसरी तरफ यदि हम ऐसे दो बिन्दु लेकर विचार करें जो परस्पर पास-पास हैं– जैसे कि **देहली** में स्थित

दो मकान– तो हमारा यह मानना न्याय-संगत होगा कि उनमें से गुजरने वाली सारी ऊर्ध्वाधर रेखाएँ लगभग परस्पर समान्तर हैं, अर्थात् निरपेक्ष हैं।

ऊर्ध्वाधर को निरपेक्ष मानने में बेतुकी और विरोधी स्थिति केवल तब ही पैदा होती है जब हम ऐसे क्षेत्रों पर विचार करें जिनका आकार पृथ्वी की सतह से तुलना करने योग्य हो।

जिन उदाहरणों की विवेचना हमने ऊपर की है, उनसे पता चलता है कि हमारी बहुत सी संकल्पनाएँ, जिनको हम प्रतिदिन के जीवन में प्रयोग में लाते हैं, सापेक्ष हैं, और उनका केवल तब ही कुछ अर्थ होता है जब हम निरीक्षण करने की परिस्थितियों को भी निर्दिष्ट कर दें।

●

द्वितीय खण्ड

आकाश सापेक्ष है

वही स्थान है या नहीं ?

बहुधा हम कहते हैं कि अमुक दो घटनायें एक ही स्थान पर घटित हुयीं और अपने इस दृढ़ कथन को निरपेक्ष अर्थ देने की हमारी प्रवृत्ति होती है। लेकिन वास्तव में इसका कुछ भी अर्थ नहीं होता है। यह उसी प्रकार का कथन है जैसा हम कहें कि "अभी पाँच बजे हैं" और स्पष्ट न करें कि कहाँ—शिकागो में अथवा मास्को में।

इसको ठीक प्रकार से समझने के लिए, हम कल्पना करें कि मास्को से ब्लाडीवास्टक तक जानेवाली किसी रेलगाड़ी की दो महिला यात्रियों ने प्रतिदिन परस्पर एक डिब्बे में मिलने की व्यवस्था कर ली है, और वे उस स्थान से अपने-अपने पतियों को पत्र लिखा करती हैं। (चित्र ५) उनके पतियों का हमारे इस कथन से सहमत होना अत्यन्त कठिन होगा यदि हम कहें कि उनकी पत्नियाँ आकाश में एक ही स्थान पर मिलती थीं। वे यह कहेंगे कि ये स्थान तो परस्पर सैकड़ों किलोमीटर की दूरी पर है और उनका यह कहना भी बिल्कुल सही है क्योंकि क्या उन्हें वे पत्र भिन्न-भिन्न नगरों – यारोस्लावा, पर्य, स्वेर्डलोवस्क, टूमेन, ओम्स्क तथा खबरोव्स्क से प्राप्त नहीं हुए हैं।

दो घटनायें – यात्रा करते समय प्रथम और द्वितीय दिन पत्रों का लिखना – पत्नियों की दृष्टि में एक ही स्थान पर हुआ है, लेकिन पतियों की दृष्टि में सैकड़ों किलोमीटर दूर के स्थानों पर हुआ है।

सही कौन है – पत्नियाँ या उनके पति ? इनमें से किसी का भी पक्ष लेने के लिये हमारे पास कोई आधार नहीं है। इससे हमें स्पष्ट हो जाता है कि "आकाश में एक ही स्थान" की संकल्पना सापेक्ष है।

इसी प्रकार हमारा यह कथन कि 'आकाश में दो तारे एक ही स्थान पर हैं', केवल तब ही कुछ अर्थ रखता है जब कि हम यह स्पष्ट कर दें कि उनको पृथ्वी पर से देखा गया है। दो घटनाओं का आकाश में एक ही स्थान पर होना केवल तब ही कहा जा सकता है जब हम उन पिण्डों का भी उल्लेख करें जिनके सापेक्ष उन घटनाओं का स्थान निर्धारित किया गया है।

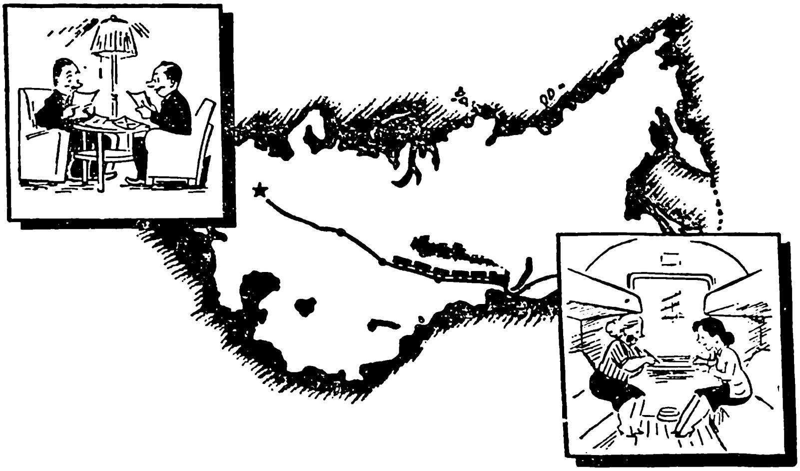

चित्र ५

इस प्रकार आकाश में स्थिति की संकल्पना भी सापेक्ष है। जब हम आकाश में किसी पिण्ड की स्थिति के विषय में बात करते हैं, तब हम हमेशा उसकी स्थिति दूसरे पिण्डों के सापेक्ष सूचित करते हैं। यदि हम किसी एक पिण्ड की स्थिति के सम्बन्ध में पूछे गये प्रश्न के उत्तर में दूसरे पिण्डों की चर्चा न करें, तो उस प्रश्न का ठीक समाधान नहीं हो सकेगा।

(पिण्ड) वास्तव में कैसे चलता है ?

अब यह निष्कर्ष निकला कि 'आकाश में किसी पिण्ड का स्थान

परिवर्तन' करने की संकल्पना भी सापेक्ष है। यदि हम कहें कि अमुक पिण्ड ने आकाश में स्थान बदल लिया है, तब हमारा मतलब यह होता है कि केवल दूसरे पिण्डों के सापेक्ष उसने अपनी स्थिति बदल ली है।

यदि हम किसी पिण्ड की गति का निरीक्षण भिन्न-भिन्न स्थानों से करें, जहाँ से उनकी सापेक्ष स्थितियाँ बदल जाती हों, तो हम देखेंगे कि उस पिण्ड की गति अलग-अलग है। (चित्र ६)

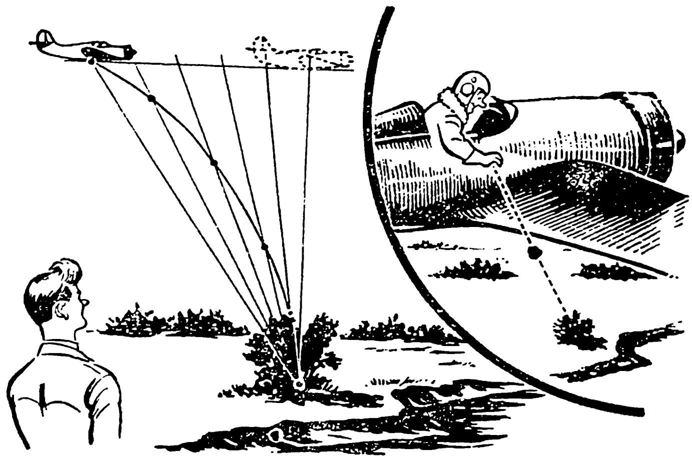

चित्र ६

यदि एक उड़ते हुये जहाज से एक पत्थर गिराया जाये, तो जहाज के सापेक्ष वह पत्थर एक सरल रेखा बनाता हुआ गिरता है। लेकिन पृथ्वी के सापेक्ष वह एक वक्र, जिसे परवलय (Parabola) कहते हैं, बनाता हुआ दिखाई देता है।

पत्थर ने वास्तव में किस मार्ग से यात्रा की ?

यह प्रश्न उसी प्रकार बिल्कुल निरर्थक है जिस प्रकार यह पूछना कि "चन्द्रमा वास्तव में किस कोण पर दिखाई देता है।" सूर्य से उसको देखा जाये तब, या पृथ्वी से देखने पर ?

कोई पिण्ड गतिशील होने पर जिस वक्र को बनाता है, उस वक्र की ज्यामितीय–आकृति ठीक उसी प्रकार सापेक्ष है जैसे कि किसी एक भवन का फोटो–चित्र। जिस प्रकार एक भवन का सामने से तथा पीछे की तरफ से फोटो लेने पर हमको भिन्न-भिन्न फोटो-चित्र प्राप्त होते हैं, ठीक उसी प्रकार पत्थर की उड़ान को भिन्न-भिन्न स्थानों से देखने पर हमें भिन्न-भिन्न वक्र दिखाई देतीं हैं।

क्या दृश्य लेने के समस्त स्थान तुल्य हैं ?

आकाश में एक पिण्ड की गति का निरीक्षण करते समय यदि हमने अपने लक्ष्य को प्रक्षेप-वक्र Trajectory (वह वक्र जो पिण्ड के चलने से बनती है) के अध्ययन तक ही सीमित रखा है तो हम निरीक्षण स्थल का चुनाव अपनी सुविधा और सरलता को ध्यान में रखते हुए करेंगे।

एक अच्छा फोटोग्राफर, जब अपने केमरा के लिये स्थान चुनता है, तो अन्य बातों के साथ-साथ वह अपने चित्र को सौन्दर्य बोध तथा उसके संयोजन का भी ध्यान रखता है।

लेकिन आकाश में पिण्डों की गति का अध्ययन करते समय हमारा लक्ष अधिक व्यापक होता है। हम केवल प्रक्षेप-वक्र को ही नहीं जानना चाहते, बल्कि दी हुई परिस्थितियों में किसी पिण्ड का मार्ग भी पहिले से ही बता देना चाहते हैं। दूसरे शब्दों में हम गति को नियंत्रित करने वाले नियमों को समझना चाहते हैं-उन नियमों को जो पिण्डों को इस या उस दिशा में चलने के लिये प्रेरित करते हैं।

जब हम गति को सापेक्षता की जांच इस दृष्टि कोण से करते हैं तो हमें मालूम होता है कि आकाश में सब स्थान तुल्य नहीं हैं।

यदि हम फोटोग्राफर से एक परिचय पत्र पर चिपकाने के लिये अपना फोटो खींचने को कहे, तो हम चाहते है कि हमारे चेहरे का फोटो-चित्र खींचा जाये न कि हमारे सिर के पिछले भाग का। (चित्र ७) इस प्रकार उसके द्वारा

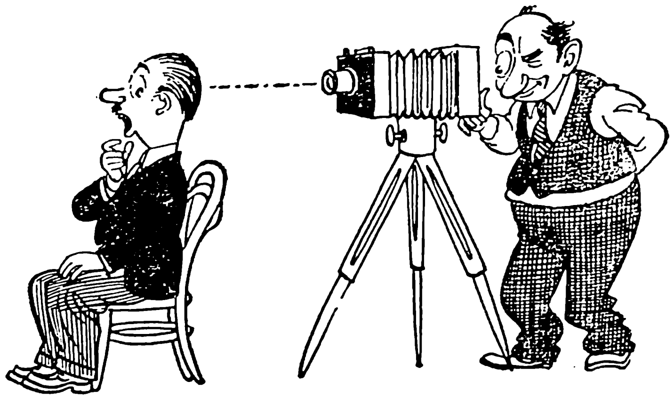

चित्र ७

हमारा फोटो-चित्र लेने का स्थान आकाश में निश्चित हो जाता है। दूसरा कोई स्थान हमारी इस जरूरत को पूरा नहीं करेगा।

विराम की स्थिति मिल गई !

पिण्डों की गति बाह्य बलों से प्रभावित होती है। इस प्रभाव का निकट से परिक्षण करने पर हमें गति की समस्या सुलझाने का बिल्कुल नया तरीका मिल जायेगा।

हम यह मानलें कि हमारे पास एक पिण्ड है जो किसी भी बाहरी बल से प्रभावित नहीं है। इस पिण्ड की गति बहुत कुछ विचित्र सी दिखेगी, जो कि हमारे निरीक्षण-बिन्दु पर निर्भर करेगी। लेकिन यह स्पष्ट है कि निरीक्षक के लिये सबसे अधिक स्वाभाविक स्थिति वह होगी, जहाँ से वह पिण्ड विराम-स्थिति में होगा।

इस प्रकार अब हम, दिये हुए पिण्ड को दूसरे पिण्डों के सापेक्ष गति के होते हुए भी उस पिण्ड की विराम-स्थिति की एक बिल्कुल नई परिभाषा दे सकते हैं। वह इस प्रकार है कि एक पिण्ड, जो किसी भी बाह्य बल के प्रभाव से मुक्त हो, विराम-स्थिति में है।

जड़त्वीय फ्रेम

हम विराम-स्थिति किस प्रकार ला सकते हैं ? हम कब विश्वास कर लें कि कोई पिण्ड किसी भी बाहरी बल से प्रभावित नहीं है ?

इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये हमें वह पिण्ड, उस पर प्रभाव डाल सकने वाले दूसरे सब पिण्डों से इतनी अधिक दूर ले जाना होगा जितना हम ले जा सकते हैं।

हम अपनी कल्पना में ऐसे जड़त्वीय पिण्डों का एक फ्रेम – एक प्रयोगशाला – बना सकते हैं, और इस प्रयोगशाला से, जिसे हम विराम-स्थिति में मानेंगे, निरीक्षण करके गति के गुण-धर्मों की विवेचना कर सकते हैं।

यदि किसी दूसरी प्रयोगशाला में निरीक्षण करने पर गति के गुण-धर्म, हमारी प्रयोगशाला में निरीक्षण किये हुए गति के गुणधर्मों से भिन्न हों तो हमें यह कहने का अधिकार होगा कि पहली प्रयोगशाला गतिशील थी।

क्या रेलगाड़ी गतिशील है ?

यह स्थापित करने के बाद कि एक गतिशील प्रयोगशाला में गति को नियन्त्रित करने वाले नियम उन नियमों से भिन्न होते हैं जो कि एक जड़त्वीय प्रयोगशाला में प्रचलित हैं, हमें गति की संकल्पना अपने सापेक्ष गुण को छोड़ती हुई मालुम देगी। तब हमें केवल आपेक्षिक जड़ता की गति ही सूचित करनी पड़ेगी और उसी को निरपेक्ष बताना होगा।

लेकिन क्या एक जड़त्वीय प्रयोगशाला में प्रचलित नियम, प्रयोगशाला के गतिशील हो जाने पर प्रत्येक अवस्था में बदल जायेंगे ?

मान लीजिये कि हम एक रेलगाड़ी पर सवार हैं जो एक समान चाल से एक सरल रेखा में गतिशील है, और हम गाड़ी के अन्दर पिण्डों के व्यवहार का निरीक्षण करते हैं तथा उसकी तुलना एक गतिहीन रेलगाड़ी के अन्दर पिण्डों के व्यवहार से करते हैं।

हमारा प्रतिदिन का अनुभव है कि एक स्थिर चाल से सरल रेखा में

चलती हुई रेलगाड़ी में पिण्डों की गति वैसी ही होती है जैसी एक निश्चल रेलगाड़ी में होती है। गतिशील रेलगाड़ी के अन्दर हवा में उछाली हुई एक गेंद सदा ही वापिस आपके हाथों में ही गिरेगी। (चित्र ८)

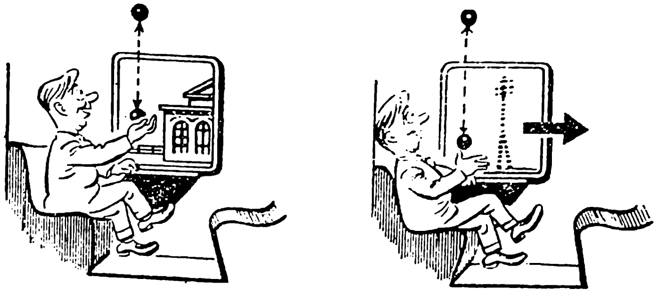

चित्र ८

यदि हम झटकों के कारण होने वाले प्रभाव को छोड़ दें, जो कि तकनीकी कारणों से होना अनिवार्य है, तो हम पायेंगे कि एक गतिशील रेलगाड़ी में घटित होने वाली प्रत्येक घटना एक निश्चल रेलगाड़ी में भी उसी प्रकार घटित होती है।

लेकिन जब रेलगाड़ी अपनी चाल को घटाती है अथवा बढ़ाती है तब स्थिति कुछ भिन्न हो जाती है। पहिली दशा में तो हमें आगे की तरफ एक झटके का अनुभव होगा और दूसरी दशा में पीछे की तरफ झटका लगेगा। यह बात विराम स्थिति से बिल्कुल भिन्न होगी।

यदि स्थिर चाल से चलती हुई एक रेलगाड़ी अपनी दिशा बदले तो इस परिवर्तन को हम भी तुरन्त अनुभव कर लेंगे। तीखे दाहिने मोड़ पर हम गाड़ी के बाँयीं तरफ को दब जायेंगे तथा बाँये मोड़ पर स्थिति इसके विपरीत होगी।

अतः, हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि जब तक एक प्रयोगशाला एक समान गति से तथा एक अन्य विराम-स्थिति वाली प्रयोगशाला के सापेक्ष एक ही सरल रेखा में चलती रहती है, तब तक दूसरी प्रयोगशाला के अन्दर पिण्डों के व्यवहार में अन्तर देख पाना असम्भव होगा। तथापि जैसे ही गतिशील

प्रयोगशाला की गति में परिवर्तन होता है – त्वरण अथवा मन्दन अथवा दिशा परिवर्तन होता है – तो तत्काल ही उसके अन्दर के पिण्डों के व्यवहार पर इसका प्रभाव देखने में आता है।

विराम की स्थिति सदा के लिए खो गई

एक समान गति से सरल रेखा में गतिशील प्रयोगशाला अपने अन्दर के पिण्डों के व्यवहार पर कोई प्रभाव नहीं डालती, (यह आश्चर्यजनक तथ्य) हमें अपनी विराम-स्थिति की संकल्पना को पुनः निरीक्षण करने के लिये बाध्य करता है। यह इस बात की पुष्टि करता है कि विराम की स्थिति तथा समान गति से एक सरल रेखा में गतिशील होने की स्थिति, इन दोनों में कोई भेद नहीं है। किसी प्रयोगशाला को, जो दूसरी विराम-स्थिति वाली प्रयोगशाला के सापेक्ष समान गति से और सरल रेखा में गतिशील हो, विराम की स्थिति में माना जा सकता है। इसका यह अर्थ हुआ कि विराम की कोई एक निरपेक्ष स्थिति नहीं है, बल्कि अगणित विभिन्न 'विराम की स्थितियाँ' है। इसलिये 'विराम की स्थिति वाली' प्रयोगशालाओं की संख्या भी अनन्त हैं, जो समान गति से और परस्पर एक दूसरे के सापेक्ष सरल रेखाओं में भिन्न-भिन्न चालों से चल रही हैं।

चूंकि विराम की स्थिति सापेक्ष है, निरपेक्ष नहीं है, अतः हमें प्रत्येक समय यह बताना होगा कि इन एक समान गति से और परस्पर एक दूसरे के सापेक्ष सरल रेखाओं में चलने वाली असंख्य प्रयोगशालाओं में से कौन सी प्रयोगशाला के सापेक्ष हमने किसी गति का निरीक्षण किया है।

इस प्रकार हम गति की संकल्पना को एक निरपेक्ष संकल्पना सिद्ध करने में असफल हो गये।

हम किस 'विराम की स्थिति' के सापेक्ष गति का निरीक्षण करते हैं? यह एक ऐसा प्रश्न है जो सदा के लिये चर्चा का विषय है।

इस प्रकार हम प्रकृति के अत्यन्त महत्त्वपूर्ण नियम तक आ गये, जिसे बहुधा आपेक्षिक गति का नियम कहते हैं।

इस नियम के अनुसार समान गति से और परस्पर एक दूसरे के सापेक्ष सरल रेखाओं में चलने वाले फ्रेमों के अन्दर पिण्डों की गति एक ही समान नियमों के द्वारा नियन्त्रित होती है।

जड़त्व का नियम

गति की सापेक्षता के नियम के अनुसार एक पिण्ड, जिस पर किसी भी बाहरी बल का कोई प्रभाव नहीं है, या तो विराम की अवस्था में होगा अथवा एक सरल रेखा में और समान गति से गतिशील होगा। यह एक ऐसा प्रतिबन्ध है जिसे भौतिक-विद जड़त्व का नियम कहते हैं।

तथापि हमारे दैनिक जीवन मे इस नियम का क्रियाशील होना अस्पष्ट रहता है और प्रत्यक्ष रूप से स्वयं को प्रगट नहीं कर पाता। जड़त्व के नियम के अनुसार समान गति से सरल रेखा में गतिशील पिण्ड सदा के लिये ऐसा करता रहेगा, यदि कोई बाहरी बल उस पर क्रियाशील न हो। तथापि हमारे निरीक्षणों से हमें मालूम है कि भले ही हम कोई बाहरी बल न लगायें तो भी पिण्ड गतिहीन हो ही जायगा। (चित्र ६)

चित्र ६

इस पहेली का हल इस तथ्य में निहित है कि हमें दिखाई देने वाले सारे पिण्डों पर कुछ बाहरी बलों – घर्षण-बलों – का प्रभाव पड़ता ही है।

वह परिस्थिति जो हमें जड़त्व के नियम का निरीक्षण करने के लिए आवश्यक है – अर्थात् पिण्ड पर क्रियाशील होने वाले बाहरी बलों की अनुपस्थिति – हमें कहीं भी नहीं मिलती। लेकिन प्रयोग की परिस्थिति में सुधार करने पर अर्थात् घर्षण–बलों को कम से कम कर देने पर, हम उस आदर्श परिस्थिति के निकट पहुँच सकते हैं, जो जड़त्व के नियम का निरीक्षण करने के लिए आवश्यक है और इस प्रकार हम सिद्ध कर सकते हैं कि हमारे दैनिक जीवन में दिखाई देने वाली गतियों के लिए भी यह नियम लागू होता है।

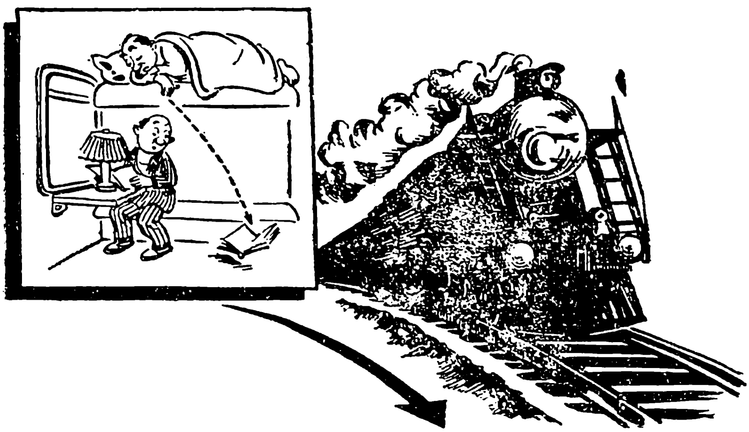

चित्र १०

गति की सापेक्षता के नियम की खोज मनुष्य की महानतम खोजों में से एक है। इसके बिना भौतिक-विज्ञान आगे उन्नति कर ही नहीं सकता था। इस खोज के लिए हम गेलीलिओ की अपूर्व प्रतिभा के ऋणी हैं, जिसने साहस के साथ अरस्तू की शिक्षाओं का विरोध किया, जिनकी उस समय प्रधानता थी और जो कैथलिक चर्च के द्वारा दृढ़ता से समर्थित थीं। अरस्तू के अनुसार गति तब ही सम्भव हो सकती थी, जबकि बल लगाया जाये और बल हटाते ही उसे अनिवार्य रूप से रुक जाना चाहिए। गेलीलिओ ने अनेक प्रसिद्ध प्रयोगों द्वारा बिल्कुल विपरीत बात सिद्ध कर दी। उसने बताया कि घर्षण ही वह बल है, जो गतिशील पिण्डों को गतिहीन कर देता है तथा यदि घर्षण न हो तो किसी पिण्ड को एक बार गति दे देने पर वह सदा के लिए गतिशील रहेगा।

वेग भी सापेक्ष है !

गति की सापेक्षता के नियम से यह परिणाम निकलता है कि किसी दिये हुए वेग से चलने वाले पिण्ड की समान और सरल-रेखीय गति एक अर्थ-हीन संकल्पना है, जब तक हम यह न बताएं कि किस जड़त्वीय फ्रेम सापेक्ष उस दिये हुये वेग को मापा गया है । यही बात रेखांश की संकल्पना के बारे में कही जा सकती है यदि हम यह न बताएँ कि किस याम्योत्तर वृत्त से उसे मापा गया है ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि वेग भी एक सापेक्ष संकल्पना है । यदि हम एक पिण्ड का वेग भिन्न-भिन्न जड़त्वीय फ्रेमों के सापेक्ष निर्धारित करें, तो हमें अलग-अलग परिणाम प्राप्त होंगे ।

फिर भी वेग के प्रत्येक परिवर्तन से, चाहे वो त्वरण या मन्दन या दिशा परिवर्तन हो, निरपेक्ष अर्थ निकलता है और यह परिवर्तन उन फ्रेमों की स्थितियों पर निर्भर नहीं करता, जहाँ से हम निरीक्षण करते हैं ।

●

तृतीय खण्ड

प्रकाश (की त्रासदी)

प्रकाश का संचरण तात्क्षणिक नहीं है

गति की सापेक्षता के नियम और अनगिनत जड़त्वीय फ्रेमों के अस्तित्व को हमने विश्वास-पूर्वक मान लिया है। इन फ्रेमों में पिण्डों की गति को नियन्त्रित करने वाले नियम एक समान होते हैं। तथापि, एक ऐसी गति का अस्तित्व भी है, जो कि प्रथम दृष्टि से देखने पर, हमारे द्वारा ऊपर स्थापित किये गये नियम का विरोध करती है। प्रकाश का संचरण एक ऐसी गति है।

प्रकाश का संचरण तात्क्षणिक नहीं है, यद्यपि उसका वेग अत्यधिक है – ३००००० किलोमीटर प्रति सैकेण्ड।

इस अत्यधिक वेग की कल्पना करना भी कठिन है, क्योंकि हमारा वास्ता तो अत्यन्त न्यून चालों से ही पड़ता है। उदाहरणार्थ सोवियत रूस के सबसे आधुनिक-राकेट की चाल केवल १२ किलोमीटर प्रति सैकेण्ड है। जितने भी पिण्डों से हमारा सम्बन्ध आता है, उनमें से पृथ्वी का सूर्य की परिक्रमा करने का वेग सबसे अधिक है। लेकिन पृथ्वी का यह वेग भी केवल ३० किलोमीटर प्रति सैकेण्ड है।

क्या प्रकाश का वेग बदला जा सकता है ?

प्रकाश के संचार का अत्याधिक वेग होना कोई असाधारण बात नहीं है। इससे भी अधिक आश्चर्यजनक तथ्य यह है कि यह वेग बिल्कुल स्थिर है।

आप किसी पिण्ड की गति को सदा ही कृत्रिम तरीकों से घटा या बढ़ा सकते हैं। बन्दूक की गोली के वेग को भी आप घटा सकते हैं। इसके लिए आपको उसके मार्ग में रेत से भरा एक सन्दूक रखना पड़ेगा। इस सन्दूक में प्रवेश करने के बाद गोली का वेग कम हो जायेगा।

लेकिन प्रकाश के साथ बात कुछ भिन्न है। बन्दूक की गोली का वेग अधिकतर उस रायफल की बनावट पर, जिससे कि उसे छोड़ा जाता है, और बारूद के गुणों पर निर्भर करता है, जबकि प्रकाश का वेग सदा वही रहता है चाहे उसका स्रोत कुछ भी हो।

एक किरणावली के मार्ग में मान लो हमने एक काँच की प्लेट रख दी। चूँकि काँच में प्रकाश का वेग निर्वात-स्थान (Vacuum) में उसके वेग की अपेक्षा कम है, अतः किरणावली धीमी गति से चलेगी। तथापि, काँच में से बाहर निकलने के बाद, प्रकाश अपने ३००००० किलोमीटर प्रति सैकेण्ड की चाल को पुनः प्राप्त कर लेगा।

निर्वात-स्थान में प्रकाश के संचार में, जो दूसरी सब प्रकार की गतियों से भिन्न है, यह बहुत महत्त्वपूर्ण गुण है कि आप उसमें त्वरण या मन्दन पैदा नहीं कर सकते। पदार्थों (Matter) के भीतर किरणवली में चाहे जो परिवर्तन हो, लेकिन एक बार पुनः निर्वात-स्थान में बाहर निकलने पर उसका संचार उसी गति से होने लगता है।

प्रकाश और ध्वनि

इस सम्बन्ध में प्रकाश का सञ्चार हमें पिण्डों की सामान्य गति की अपेक्षा ध्वनि के सञ्चार की याद अधिक दिलाता है। ध्वनि उन माध्यमों के कम्पन से होती है, जिनमें उसका सञ्चार होता है। इसलिए ध्वनि का वेग माध्यमों के गुणों पर निर्भर करता है और ध्वनि-उत्पादन करने वाली वस्तु के

गुण पर निर्भर नहीं करता। ध्वनि के वेग को भी प्रकाश के वेग की तरह दूसरी वस्तुओं में से गुजारकर घटाया या बढ़ाया नहीं जा सकता।

यदि हम धातु की बनी हुई कोई रुकावट, ध्वनि के मार्ग में रख दें, तो ध्वनि का वेग उस रुकावट के अन्दर बदल जायेगा, लेकिन जैसे ही ध्वनि उसमें से बाहर निकलकर फिर से अपने प्रारम्भिक माध्यम में आती है, तो वह पुनः अपने प्रारम्भिक वेग को प्राप्त कर लेती है।

मान लीजिये कि हम एक विद्युत बल्ब और एक विद्युत घण्टी काँच के ढक्कन के नीचे रखें और एक वायु-पम्प द्वारा ढक्कन के नीचे से सारी हवा बाहर निकालना प्रारम्भ करें। घण्टी की ध्वनि क्रमशः धीमी होती जायेगी, यहाँ तक कि फिर वह बिलकुल सुनाई नहीं देगी। इसके विपरित वह बल्ब पहिले की तरह ही प्रकाश विकीर्ण करता रहेगा।

इस प्रयोग से यह सिद्ध होता है कि ध्वनि का सञ्चार किसी पदार्थ के माध्यम से ही होता है, जब कि प्रकाश का सञ्चार निर्वात में भी हो सकता है।

इनके सञ्चार में यही मुख्य अन्तर है।

गति की आपेक्षिकता का नियम डिगता हुआ प्रतीत होता है

निर्वात-स्थान में प्रकाश का अत्यधिक वेग, लेकिन जो अनन्त नहीं है, हमें गति की आपेक्षिकता के नियम से विरोधी स्थिति में ला देता है।

कल्पना कीजिये कि एक रेलगाड़ी २४०,००० किलोमीटर प्रति सैकण्ड के अत्यधिक वेग से दौड़ रही है। हम सबसे आगे वाले डब्बे में सवार हैं और एक विद्युत बल्ब सबसे अन्तिम डब्बे में प्रकाशित किया गया है। अब हम मालूम करें कि यदि हम रेलगाड़ी के एक सिरे से दूसरे सिरे तक प्रकाश के पहुँचने में लगने वाले समय को मापें, तो हमें क्या परिणाम प्राप्त होंगे?

हमें ऐसा मालूम होगा कि यह समय उस समय से भिन्न होगा जो एक निश्चल रेलगाड़ी में लगता। वास्तव में, २४०,००० किलोमीटर प्रति सैकण्ड की चाल से चलने वाली एक रेलगाड़ी के सापेक्ष, प्रकाश को केवल

३०००००—२४००००=६०००० किलोमीटर प्रति सैकण्ड की चाल से चलना चाहिये। यह ऐसा ही है जैसे की प्रकाश को सबसे आगे वाले डब्वे तक पहुँचना। यदि हम बल्ब को रेल के सबसे आगे वाले डब्वे में रखें और सबसे अन्तिम डब्वे में प्रकाश को पहुँचने में लगने वाले समय को मापें तो ऐसा मालूम होगा कि रेलगाड़ी की गति की विपरीत दिशा में प्रकाश का वेग २४००००+३०००००=५४०००० किलोमीटर प्रति सैकण्ड है। प्रकाश और अन्तिम डिब्बा परस्पर एक-दूसरे की ओर चल रहे हैं।

इस प्रकार ऐसा प्रतात होता है कि एक गतिशील रेलगाड़ी में प्रकाश का सञ्चार भिन्न-भिन्न दिशाओं में भिन्न-भिन्न वेगों से होना चाहिये, जबकि एक निश्चल खड़ी हुई रेलगाड़ी में प्रकाश का वेग दोनों दिशाओं में वही रहता है।

बन्दूक की गोली के विषय में बात विलकुल भिन्न होती है। चाहे उसे रेलगाड़ी की गति की दिशा में छोड़ा जाये या विपरीत दिशा में। डिब्वे की दीवारों के सापेक्ष गोली का वेग वही रहेगा, जो गतिहीन रेलगाड़ी में गोली के वेग के बराबर होता।

यह एक तथ्य है कि गोली का वेग रायफल की चाल पर निर्भर करता है, जबकि प्रकाश का वेग, जैसा हम पहिले ही बता चुके हैं, बल्ब की चाल में परिवर्तन आने पर बदलता नहीं है।

हमारे तर्क से ऐसा मालूम होता है कि प्रकाश का सञ्चार गति की आपेक्षिकता के नियम का तीव्र विरोधी है। एक बन्दूक की गोली, गतिशील अथवा गतिहीन रेलगाड़ी की दीवारों के सापेक्ष, एक से ही वेग से भागती है, जबकि २४०००० किलोमीटर प्रति सैकण्ड की गति से चलने वाली रेलगाड़ी में प्रकाश का आभासी सञ्चार, एक गतिहीन रेलगाड़ी के अन्दर की अपेक्षा पाँच गुनी धीमी रफ्तार से एक दिशा में होता है और १.८ गुनी तेज रफ्तार से विपरीत दिशा में होता है।

ऐसा लगता है कि प्रकाश के संचार का अध्ययन करने से हम रेलगाड़ी की गति की निरपेक्ष चाल स्थापित कर सकेंगें।

चित्र ११

हमें यह आशा हो जाती है कि शायद हम प्रकाश के संचार की दृश्य-घटना के द्वारा विराम की निरपेक्ष स्थिति की संकल्पना स्थापित कर सकें।

वह फ्रेम, जिसमें प्रकाश का संचार सभी दिशाओं में ३००००० किलोमीटर प्रति सैकण्ड के स्थिर वेग से हो, निरपेक्ष विराम की स्थिति में कहा जा सकता है। दूसरे किसी फ्रेम में जो हमारे फ्रेम के सापेक्ष एक समान और सरल रेखा में गतिशील हो, प्रकाश का वेग भिन्न-भिन्न दिशाओं में भिन्न-भिन्न होना चाहिये। इस दशा में गति की सापेक्षता, वेग की सापेक्षता और विराम-स्थिति की सापेक्षता, जिन्हें हम ऊपर स्थापित कर चुके हैं, अस्तित्व नहीं रखते।

विश्व-ईथर (World-Ether)

इसकी कल्पना हम कैसे करें? एक ससय था जबकि भौतिक-विदों ने ध्वनि के संचार और प्रकाश के संचार की दृश्य-घटना के बीच अनुरूपता का उपयोग कर एक विशेष माध्यम–ईथर–के अस्तित्व की कल्पना की थी। और इस माध्यम में प्रकाश का सञ्चार उसी प्रकार होता है, जिस प्रकार हवा

में ध्वनि का सञ्चार होता है। वे यह मानते थे कि जैसे लकड़ी की पतली पट्टियों से बना एक पिंजरा पानी में तैरने पर पानी को नहीं धकेलता है, उसी प्रकार ईथर में से जाने वाले समस्त पिण्ड ईथर को भी नहीं धकेलते।

यदि हमारी रेलगाड़ी ईथर के सापेक्ष गतिहीन हो, तो प्रकाश का संचार सभी दिशाओं में उसी वेग से ही होगा। ईथर के सापेक्ष रेलगाड़ी की गति का ज्ञान, हमें तुरन्त इस तथ्य से हो जायेगा, जब प्रकाश का वेग भिन्न-भिन्न दिशाओं में भिन्न-भिन्न होगा।

तथापि, ईथर की कल्पना ने, जो एक ऐसा माध्यम है, जिसका कम्पन हम प्रकाश के रूप में देखते हैं, कई प्रश्नों को जन्म दिया है। सर्व प्रथम यह परिकल्पना स्वयं ही स्पष्टतया कृत्रिम है। वास्तव में एक ओर तो हम हवा के गुणों का अध्ययन केवल उसमें से ध्वनि के संचार का निरीक्षण करके ही नहीं, बल्कि अनुसन्धान की कई भौतिक और रासायनिक विधियों के द्वारा भी कर सकते हैं। लेकिन दूसरी ओर कुछ रहस्यमय कारण से, ईथर बहुत-सी दृश्य-घटनाओं में कोई भाग नहीं लेता। हवा का घनत्व और उसका दबाव सुगमता से, बिलकुल अपरिष्कृत विधियों से भी, मापा जा सकता है तो भी ईथर के घनत्व और उसके दबाव के बारे में कुछ ज्ञान प्राप्त करने के हमारे सारे प्रयत्न निष्फल हुए हैं।

स्थिति वास्तव में उपहासास्पद है।

प्रकृति की समस्त दृश्य-घटनाओं को, वांछित गुणों से युक्त किसी विशेष तरल पदार्थ की कल्पना करके, अवश्य समझाया जा सकता है। लेकिन एक दृश्य-घटना के यथार्थ सिद्धान्त और वैज्ञानिक नियमों से सम्बन्धित प्रसिद्ध तथ्यों के सरल पदान्वय के बीच जो भेद है वह शुद्धतया इस तथ्य में निहित है कि हम उन तथ्यों की अपेक्षा, जिन पर कि सिद्धान्त आधारित है, सिद्धान्त से ढेरों अधिक निष्कर्ष निकाल लेते हैं। उदाहरण के लिए, परमाणु की संकल्पना को लीजिये। इस संकल्पना को रसायन-विज्ञान ने विज्ञान में प्रचलित किया, लेकिन परमाणुओं के विषय में हमारी संकल्पना ने बहुत-सी दृश्य-घटनाओं को, जिनका रसायन-विज्ञान से कोई सम्बन्ध नहीं है, समझाने और उनके सम्बन्ध में भविष्यवाणी करने के योग्य हमें बना दिया है।

ईथर की संकल्पना की उपमा उस व्याख्या से देना न्याय-संगत होगा, जो कोई जंगली मनुष्य ग्रामोफोन के विषय में देता है कि एक विशेष प्रकार का 'ग्रामोफोन-प्रेत' इस रहस्यमयी सन्दूक में कैद है। लेकिन ऐसी व्याख्याओं से कुछ भी अर्थ नहीं निकलता।

भौतिक-विदों को ईथर से पूर्व भी इसी प्रकार का दुर्भाग्यशाली अनुभव रहा है। एक समय था जब कि वे दहन (Combustion) की क्रिया को एक विशेष प्रकार के तरल, पदार्थ के जिसे वे फलोजिस्टन (Flogiston) कहते थे, गुणों के द्वारा समझाते थे, और अष्मा की क्रिया को दूसरे तरल–हेटरोड (Hetorode) के गुणों के द्वारा समझाते थे। ये तरल पदार्थ भी ईथर से किसी प्रकार कम भ्रमोत्पादक नहीं थे।

कठिन परिस्थिति

हमारी मुख्य कठिनाई तो इस कारण है कि यदि प्रकाश के संचरण से सापेक्षता के नियम का उल्लंघन होता है, तो इस नियम का उल्लंघन समस्त पिण्डों के द्वारा भी होना चाहिए था। साथ ही कोई भी माध्यम पिण्डों की गति में प्रतिरोध प्रस्तुत करता है। इसलिए ईथर में पिण्डों के विस्थापन (displacement) से भी घर्षण उत्पन्न होना चाहिए। अतः पिण्ड की गति धीमी पड़नी चाहिए, और अन्त में उसे गतिरोध अर्थात् विराम-स्थिति में आ जाना चाहिए। लेकिन भू-गर्भ सम्बन्धी तथ्यों के अनुसार, सूर्य के चारों ओर पृथ्वी का परिभ्रमण कई अरब वर्षों से हो रहा है और घर्षण के कारण इसकी चाल में लेशमात्र भी कमी नहीं दिखाई देती है।

इस प्रकार एक गतिशील रेलगाड़ी में प्रकाश के अद्भुत व्यवहार को ईथर की उपस्थिति के द्वारा समझाने का प्रयत्न करने से हम एक बन्द गली में पहुँच जाते हैं। ईथर की संकल्पना से इस अन्तर्विरोध का अन्त नहीं होता कि प्रकाश के द्वारा तो सापेक्षता के नियम का उल्लंघन होता है, लेकिन अन्य समस्त गतियों द्वारा इस नियम का पालन होता है।

प्रयोग के द्वारा इसका निर्णय हो।

इस अन्तर्विरोध के लिए हमें क्या करना चाहिए? इस बारे में अपने विचारों को व्यक्त करने से पहिले हम निम्नलिखित परिस्थिति पर ध्यान दें।

प्रकाश के संचरण और गति की सापेक्षता के बीच जो अन्तर्विरोध उत्पन्न हुआ है, वह केवल हमारी मानस-निर्मित परिस्थिति है।

यह सच है कि ऐसा अर्थ लगाना बहुत उचित प्रतीत होता था। लेकिन यदि हम स्वयं को केवल तर्क तक ही सीमित रखें, तो हम एक ऐसे प्राचीन दार्शनिक के समान हो जायेंगे, जिसने केवल चिंतन करके ही प्रकृति के नियमों को ज्ञात करने की कोशिश की हो। इसमें एक अनिवार्य खतरा यह होगा कि इस आधार पर निर्मित विश्व एक दिन विकसित होकर वास्तविक विश्व से बिलकुल भिन्न हो जाये।

समस्त भौतिक सिद्धान्तों का सर्वोच्च निर्णायक प्रयोग ही होता है। इसलिये हम अपने आपको केवल तर्कों तक ही सीमित नहीं रखेगें कि एक गतिशील रेलगाड़ी में प्रकाश का संचरण किस प्रकार होता है, बल्कि उन प्रयोगों पर भी विचार करेंगे कि इन परिस्थितियों में प्रकाश का संचरण वास्तव में किस प्रकार होता है।

हम स्वयं एक गतिशील पिण्ड पर हैं। अतः हमारा प्रयोग सहज हो जाता है। सूर्य का परिभ्रमण करते समय, पृथ्वी सरल रेखा में नहीं चलती, इसलिये किसी भी दूसरे फ्रेम सापेक्ष वह सदैव विरामावस्था में नहीं हो सकती।

यदि हम एक ऐसी फ्रेम भी चुनें, जिसके सापेक्ष पृथ्वी जनवरी में गतिहीन हो, तो भी जुलाई में उसका गतिशील होना निश्चित है, क्योंकि सूर्य के चारों ओर पृथ्वी के परिभ्रमण की दिशा बदलती जाती है। इसलिये, पृथ्वी पर प्रकाश के संचार का अध्ययन करना, वास्तव में, ३० किलोमीटर प्रति सैकण्ड की चाल से गतिशील एक ऐसे फ्रेम में अध्ययन करने के समान हैं, जिसकी गति हमारी परिस्थितियों में यथेष्ट है। (अपनी धुरी पर पृथ्वी के परिभ्रमण की गति लगभग आधा किलोमीटर प्रति सैकण्ड है। अतः हम इसकी उपेक्षा कर सकते हैं।)

तथापि क्या हमारी पृथ्वी की उपमा उस गतिशील रेलगाड़ी से करना न्याय-संगत होगा, जिसकी विवेचना हमने ऊपर की है और जिसने हमको एक बन्दगली में ढकेल दिया था? रेलगाड़ी तो एक समान गति से और एक सरल

रेखा में चल रही थी, जब कि पृथ्वी की गति वक्र पथ पर है। इसका उत्तर है – हाँ, हमारा ऐसा मान लेना न्याय-संगत होगा। हम पृथ्वी को एक सैकण्ड के उस अनन्त सूक्ष्म हिस्से में एक समान और एक सरल रेखा में गतिशील मान सकते हैं, जिसमें प्रकाश निरीक्षण-बिन्दुओं में से होकर जाता है। इसमें त्रुटि की गुन्जाइश इतनी नगण्य है कि उसका पता ही नहीं चल सकता।

चूँकि हमने रेलगाड़ी और पृथ्वी को एक समान माना है, अतः यह आशा करना स्वाभाविक होगा कि पृथ्वी पर प्रकाश उसी अद्भुत प्रकार से व्यवहार करे जैसा कि उसने हमारी रेलगाड़ी में किया था, अर्थात उसका संचार भिन्न-भिन्न दिशाओं में भिन्न-भिन्न वेगों से होगा।

आपेक्षिकता के नियम की विजय होती है

इस प्रकार का एक प्रयोग १८८१ में अलबर्ट माइकलसन ने किया, जो कि १९ वीं शताब्दी के एक महानतम प्रयोग-कर्ता थे। उन्होंने प्रकाश के संचरण के वेग को भिन्न-भिन्न दिशाओं में बहुत परिशुद्धता से मापा। वेगों में अति अल्प प्रत्याशित अन्तर का पता लगाने के लिए माइकलसन ने अत्यन्त परिशुद्ध और सप्रयुक्त प्रायोगिक उपकरणों का उपयोग किया। उनके प्रयोग की परिशुद्धता इतनी अधिक थी कि वे वेगों में प्रत्याशित अन्तर से भी अत्यन्त लघु अन्तर का पता लगा सकते थे।

माइकलसन के प्रयोग से, जिसे बाद में विभिन्न परिस्थितियों के अन्तर्गत दोहराया गया, बिलकुल अप्रत्याशित परिणाम प्राप्त हुये। गतिशील फ्रेम में प्रकाश का सञ्चार उससे बिलकुल भिन्न प्रकार से होता था, जिसका कि हमने अनुमान लगाया था। माइकलसन ने यह खोज की कि इस परिभ्रमण करती हुई, पृथ्वी पर प्रकाश का सञ्चार सभी दिशाओं में एक स्थिर वेग से होता है। इस सम्बन्ध में, प्रकाश का संचार हमें एक गोली की गति की याद दिलाता है – यह फ्रेम की गति पर निर्भर नहीं करती, और फ्रेम की दीवारों सापेक्ष उसका वेग सभी दिशाओं में समान रहता है।

इस प्रकार माइकलसन के प्रयोग ने हमारे अनुमान के विपरीत यह सिद्ध किया कि प्रकाश के संचार की परिघटना, गति की सापेक्षता के नियम

से पूरी तरह सहमत है न कि उसकी विरोधी। दूसरे शब्दों में, हमारे पिछले सारे तर्क गलत थे।

कढ़ाई से निकल कर चूल्हे में गिरे

(कुएँ से निकल कर खाई में ?)

हमने प्रकाश के संचार के नियमों और गति की सापेक्षता के नियम के बीच असुविधा-कारक अन्तर्विरोध को दूर हटा दिया है। यह अन्तर्विरोध तो केवल दिखावटी था, जो कि हमारे गलत तर्क के कारण था। आखिर हमने यह गलती क्यों की थी ?

लगभग एक शताब्दी के चतुर्थांश तक, (१८८१ से १९०५ तक) भौतिक-विदों ने अपने मस्तिष्क को इस समस्या की तरफ लगाया तो भी उनकी सारी व्याख्याओं से सिद्धान्त और व्यवहारों (practice) के बीच नये-नये अन्तर्विरोध प्रगट हुए।

यदि ध्वनि का स्रोत और प्रेक्षक पतली छड़ों से बने हुए एक पिंजरे में यात्रा करें, तो प्रेक्षक को तेज हवा बहने का अनुभव होगा। यदि हम ध्वनि के वेग को पिंजरे के सापेक्ष मापें तो उसका मान पिंजरे की गति की दिशा में, विपरीत दिशा की अपेक्षा कम होगा। तथापि यदि हम ध्वनि के स्रोत को एक गाड़ी में रखें, जिसकी सब खिड़कियाँ और दरवाजे मजबूती से बन्द हैं, तब ध्वनि के वेग को मापने पर हमें ज्ञात होगा कि ध्वनि का वेग सब दिशाओं में समान है क्योंकि गाड़ी के अन्दर की हवा पर गाड़ी की गति का कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता।

यदि हम ध्वनि के स्थान पर प्रकाश को लें, तो हम माइकलसन के प्रयोग की व्याख्या करने के लिए निम्नलिखित कल्पना कर सकते हैं। पृथ्वी जब अवकाश में से भागती हुई चलती है, तब ईथर को अविचल नहीं छोड़ती है, जैसा कि पतली छड़ों का बना हुआ पिंजरा करता है। इसके विपरीत यदि हम यह मानें कि वह ईथर को अपने साथ ही ले जाती है, और गतिशील रहते समय वह ईथर के साथ मिलकर एक पूर्ण इकाई बन जाती है, तो इस दशा में माइकलसन के प्रयोग का परिणाम हम पूरी तरह से समझ सकते हैं।

लेकिन यह कल्पना दूसरे बहुत से प्रयोगों के परिणामों से मेल नहीं खाती है, उदाहरणार्थ, एक नली में बहते हुए पानी में से प्रकाश का संचार देखने के लिए किये गये प्रयोग से, यदि ईथर के विषय में हमारी यह कल्पना सही है कि उसे पृथ्वी अपने साथ-साथ ले जाती है, तो प्रवाह की दिशा में प्रकाश का वेग मापने से हमें शान्त व गतिहीन पानी में प्रकाश के वेग और प्रवाह के वेग के योग के तुल्य वेग प्राप्त होगा। लेकिन हमारे मापों के परिणाम-स्वरूप हमें जो मान प्राप्त होता है, वह उस मान से कम होता है, जो हमारी कल्पना सही होने पर होना चाहिए था।

हम पहिले ही कह चुके हैं कि यह बड़ी विचित्र बात है कि ईथर में से गुजरते समय पिण्डों को किसी भी प्रकार के घर्षण का अनुभव नहीं होता है। लेकिन यदि वे ईथर में से न केवल गुजरें बल्कि उसे अपने साथ-साथ ले भी जायें, तो घर्षण और अधिक होना चाहिए।

इस प्रकार माइकलसन के प्रयोग के अप्रत्याशित परिणाम प्राप्त होने के पश्चात उठने वाले अन्तर्विरोध से बचकर निकलने के सारे प्रयत्न निष्फल हो गये।

अब हम अपनी बातों को संक्षेप में कहें।

माइकलसन के प्रयोग ने गति की सापेक्षता के नियमों की पुष्टि न केवल साधारण पिण्डों के लिए, बल्कि प्रकाश के सञ्चार के लिए भी की, और इस प्रकार समस्त प्राकृतिक परिघटनाओं के लिए भी पुष्टि की।

जैसा कि हम पहिले ही देख चुके हैं, वेग की सापेक्षता गति की सापेक्षता के नियम का ही प्रत्यक्ष फल है। एक दूसरे के सापेक्ष गतिशील भिन्न-भिन्न फ्रेमों की चालें भिन्न-भिन्न होती हैं। लेकिन समस्त फ्रेमों में प्रकाश का वेग ३००००० किलोमीटर प्रति सैकण्ड ही रहता है। इसलिए वह सापेक्ष नहीं बल्कि निरपेक्ष है।

चतुर्थ खण्ड

काल सापेक्ष है।

क्या इसमें वास्तव में कोई विरोधाभास है ?

पहिली दृष्टि में देखने पर यह मालूम हो सकता है कि हम एक विशुद्ध तार्किक विरोधाभास को व्यवहार में ला रहे हैं। सब दिशाओं में प्रकाश के वेग का स्थिर रहना सापेक्षता के नियम का यथेष्ट प्रमाण है। लेकिन वेग स्वयं निरपेक्ष है।

हम पुनः स्मरण करें कि किस प्रकार एक मध्य कालीन मनुष्य इस तथ्य पर विचार करता था कि पृथ्वी गोल है। उसके लिये पृथ्वी की गोलाई और गुरुत्व बल में विरोधाभास दिखता था, क्योंकि वह सोचता था कि सारी वस्तुओं को पृथ्वी की सतह से लुढ़क कर दूर चले जाना चाहिये। तो भी हम अच्छी तरह जानते हैं कि इसमें कोई भी तर्क-संगत विरोधाभास कतई नहीं है। केवल 'ऊपर' और 'नीचे' की संकल्पनायें सापेक्ष हैं, निरपेक्ष नहीं हैं।

प्रकाश के संचार के लिये भी यही बात ठीक लागू होती है।

गति की सापेक्षता के नियम और प्रकाश के वेग की निरपेक्षता के बीज एक तर्क संगत विरोध ढूंढ़ सकना निरर्थक ही होता। लेकिन विरोधाभास तब मालूम होता है, जब हम दूसरी कल्पनाओं की स्थापना करते हैं। ठीक इसी प्रकार मध्यकालीन युग में मनुष्यों ने 'ऊपर' और 'नीचे' की संकल्पना को एक

निरपेक्ष संकल्पना मानकर इस बात का खण्डन किया था कि पृथ्वी गोल है। उनका यह बेतूका विश्वास अपर्याप्त अनुभव के कारण ही था। उस समय

चित्र १२

लोग वहुत कम यात्रा करते थे और पृथ्वी की सतह के केवल छोटे-छोटे क्षेत्रों को ही जानते थे। स्पष्टतया, कुछ ऐसा ही हमारे साथ भी हुआ है। हमारे अपर्याप्त अनुभव के कारण हमने एक सापेक्ष चीज को निरपेक्ष मान लिया है।

यदि ऐसा हुआ है तो हम अपनी त्रुटि ढूंढ निकालने के लिये आगे से हम प्रयोगों के द्वारा स्थापित मान्यताओं के अतिरिक्त कुछ भी स्वीकार नहीं करेंगे।

एक रेलगाड़ी पर सवारी ?

एक ५४०००००० किलोमीटर लम्बी रेलगाड़ी की कल्पना कीजिये, जो सरल रेखा में और २४०००० किलोमीटर प्रति सेकण्ड के एक समान वेग से चल रही है।

मान लीजिये कि रेलगाड़ी के मध्य में कहीं एक लैम्प को स्विच दवाकर प्रकाशित किया गया। और मान लीजिये कि अगले और पिछले डब्बों के स्वचालित दरवाजे उसी क्षण खुल जाते हैं, जब वल्व का प्रकाश उन तक पहुँचता है। तब क्या आप बता सकते हैं कि रेलगाड़ी में सवार मनुष्यों को क्या दिखाई देगा और प्लेटफार्म पर खड़े मनुष्यों को क्या दिखाई देगा ?

इस प्रश्न का उत्तर देते समय हम, जैसा कि निश्चय कर चुके हैं, केवल प्रयोगात्मक आँकड़े (data) को ही मानेंगे।

रेलगाड़ी के मध्य में सवार मनुष्यों को निम्नलिखित बात दिखाई देगी :

चूँकि माइकलसन के प्रयोग के अनुसार रेलगाड़ी के सापेक्ष प्रकाश सभी दिशाओं में समान वेग (३००००० कि० मी० प्रति सैकण्ड) से चलता है, अतः वह सबसे पीछे और सबसे आगे के डब्बों में एक साथ अर्थात् (२७००००० ÷ ३०००००) = ९ सैकण्ड वाद पहुँचेगा और दोनों दरवाजे भी एक साथ ही उसी समय खुलेंगे।

स्टेशन के प्लेटफार्म की सापेक्षता से प्रकाश ३००००० कि० मी० प्रति सैकण्ड की चाल से चलता है, लेकिन अन्तिम डब्बा किरणावली को पकड़ने के लिए आगे बढ़ता है। इसलिये किरणावली अन्तिम डब्बे तक २७००००० ÷ (३००००० + २४००००) = ५ सैकण्ड बाद पहुँचेगी। किरणावली को प्रथम डब्बे को पकड़ने के लिए आगे बढ़ना पड़ता है, इसलिए उस तक २७००००० ÷ (३००००० – २४००००) = ४५ सैकण्ड बाद पहुँचेगी।

प्लेटफार्म पर खड़े मनुष्यों को दरवाजे अलग-अलग समय पर खुलते हुए दिखाई देंगे— पिछला दरवाजा पहिले और अगला दरवाजा ४५ – ५ = ४० सैकण्ड बाद।

इस प्रकार दो पूर्णतः समान कार्य— रेलगाड़ी के अगले और पिछले दरवाजों का खुलना—रेलगाड़ी में सवार मनुष्यों के लिए एक ही क्षण में होता दिखेगा, जबकि प्लेटफार्म पर खड़े मनुष्यों के लिए इन दोनों कार्यों में ४० सैकण्ड का अन्तर होगा।

'व्यवहारिक ज्ञान' का निरादर होता है

क्या उपरोक्त कथन में कोई विरोधाभास है? शायद जिस तथ्य को हमने खोज निकाला है, इतना ही बेतुका है जितना कि यह कहना कि एक मगर की लम्बाई सिर से दुम तक २ मीटर है और दुम से सिर तक एक मीटर है।

हम कोशिश करें और पता लगायें कि हमें प्राप्त परिणाम प्रयोगों के अनुरूप होते हुए भी बेतुका क्यों मालूम देता है।

चित्र १३

हम कितना ही सोच विचार क्यों न करें लेकिन हमें इस तथ्य में कोई तर्क संगत विरोधाभास नहीं मिलेगा कि दो दृश्य-घटनाएँ जो रेलगाड़ी पर सवार मनुष्यों के लिए एक साथ घटित हुईं, प्लेटफार्म पर खड़े मनुष्यों के लिए ४० सैकण्ड के अन्तर से घटीं।

हम यही एक वात हम स्वयं को तसल्ली देने के लिये कह सकते हैं कि हमारे परिणाम 'व्यवहारिक ज्ञान' के पूर्णतः विरोधी है।

लेकिन यह भी स्मरण करिये कि किस प्रकार मध्यकालीन मनुष्य के 'सामान्य-ज्ञान' ने इस तथ्य के विरुद्ध विद्रोह किया था कि पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करती है? वास्तव में मध्यकालीन मनुष्य के अनुभव से यह निर्विवाद निष्कर्ष निकलता था कि पृथ्वी शान्त खड़ी हुई है और सूर्य उसके चारों आर घूम रहा है। लेकिन क्या यह हमारा 'सामान्य ज्ञान' ही नहीं था, जिसने हमें पृथ्वी के गोल न होने का उपहासास्पद प्रमाण दिया था? 'सामान्य ज्ञान' किस प्रकार वास्तविकता का विरोधी हो सकता है इस सम्बन्ध में एक प्रसिद्ध कहावत है कि एक गाय चराने वाले लड़के ने चिड़िया घर में एक जिराफ (Giraffe) को देखकर यह विस्मय प्रगट किया था कि ऐसा जानवर हो ही नहीं सकता।

तथाकथित 'सामान्य ज्ञान' वास्तव में संकल्पनाओं का संग्रह और दैनिक जीवन में बनी हुई आदतों के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। वह हमारे अनुभवों के विस्तार को प्रतिबिम्बित करने वाले बोध के एक निश्चित स्तर का निरुपण करता है।

इस बात को ग्रहण करने और समझने में, कि जो दो घटनायें रेलगाड़ी पर एक साथ घटीं थीं प्लेटफार्म से देखने पर उनमें ४० सैकन्ड का अन्तर पाया गया, कठिनाई बहुत कुछ वैसी ही है जैसी कि गाय चराने वाले लड़के को हुई थी, जब उसने जिराफ देखा था। जिस प्रकार उस लड़के ने कभी भी जिराफ को नहीं देखा था, उसी प्रकार हमने भी कभी २४०००० कि० मी० प्रति सैकण्ड की चाल से यात्रा नहीं की है। इसमें कोई आश्चर्य नहीं है कि चूंकि भौतिक-विद् ऐसे तथ्यों का निरीक्षण करते हैं, जो उन बातों से अत्यन्त भिन्न हैं, जिनके हम अपने दैनिक जीवन में अभ्यस्त हैं अतः उन भौतिक-विदों को ऐसो ही काल्पनिक चालों से वास्ता पड़ता है।

माइकलसन के प्रयोग के अप्रत्याशित परिणाम से भौतिक-विदों के सामने ऐसे नये तथ्य आये कि उनको 'सामान्य ज्ञान' को ताक में रखकर दो

समक्षणिक घटनाओं सरीखी स्पष्ट और सामान्य संकल्पनाओं का भी पुनः परीक्षण करने के लिये बाध्य होना पड़ा ।

वास्तव में इस नये तथ्य को 'सामान्य ज्ञान' के आधार पर अस्वीकार कर देना अधिक सुविधाजनक होता, लेकिन यदि हम ऐसा करते तो हम उस ग्वाल-लड़के के समान हो जाते, जो जिराफ को देखने पर भी अपनी आँखों पर विश्वास नहीं कर सका ।

काल की स्थिति भी आकाश जैसी है ।

विज्ञान तथा-कथित 'सामान्य-ज्ञान' का विरोध करने में नहीं हिचकिचाता । लेकिन जिस बात का उसको सबसे अधिक डर है, वह है प्रचलित संकल्पनाओं और नये प्रायोगिक आँकड़ों के बीच असंगति का होना । और जब कभी ऐसा होता है तो वह प्रचलित संकल्पनाओं को नष्ट कर देता है और हमारे ज्ञान को एक ऊँचे स्तर तक उठा देता है ।

हम सोचते थे कि एक साथ होने वाली दो घटनायें किसी भी फ्रेम के अन्दर एक साथ ही रहेंगी । तथापि, हमारे प्रयोग ने सिद्ध किया कि हम गलती पर थे । यह बात केवल उसी दशा में लागू होती, जबकि फ्रेम परस्पर एक दूसरे के सापेक्ष विराम स्थिति में हों । इसके विपरीत यदि दो फ्रेम एक दूसरे के सापेक्ष गतिशील हों, तो उनमें से एक फ्रेम में साथ-साथ घटित होने वाली घटनायें दूसरे ढांचे में कुछ कालान्तर से घटित होंगी । इस प्रकार समक्षणिकता की संकल्पना सापेक्ष हो गई । उसका केवल तभी कुछ अर्थ होगा जब कि हम उस फ्रेम की गति को निर्दिष्ट कर दें, जिसमें उन घटनाओं का निरीक्षण किया गया हो ।

हम पूर्व वर्णित कोणीय-मापों की सापेक्षता के दृष्टान्त का पुनः स्मरण करें । माना कि पृथ्वी से निरीक्षण करने पर उन दो तारों के बीच की कोणीय दूरी शून्य है, जो एक सीध में हैं । हमारे प्रतिदिन के जीवन में हम इस कल्पना का कभी विरोध नहीं करेंगे कि यह बात एक निरपेक्ष सत्य है । लेकिन यदि हम इस सौर-मण्डल के बाहर चले जायें और आकाश मे किसी दूसरे बिन्दु से उन्हीं दोनों तारों को देखें, तो बात कुछ भिन्न होगी । हमको कोणीय दूरी का मान शून्य से बिलकुल भिन्न प्राप्त होगी ।

यह तथ्य कि दो तारे जो कि पृथ्वी से देखने पर एक सीध में दिखाई देते हैं, आकाश में दूसरे बिन्दुओं पर से देखने पर एक सीध में नहीं हो सकते हैं, हमारे समकालीन लोगों के लिए बिलकुल स्पष्ट है, लेकिन यही बात उस मध्यकालीन मनुष्य को बेतुकी मालूम देती जो कि आसमान की कल्पना एक ऐसे गुम्बद के समान करता था, जिसमें तारे छिटके हुए हैं।

मान लीजिये कि हमसे पूछा जाता है कि फ्रेमों की बात तो जाने दो लेकिन क्या वे दो घटनायें वास्तव में एक साथ घटित हुई थीं। दुर्भाग्य से यह प्रश्न ऐसा ही है जैसा कि हमसे यह पूछा जाये कि हमारे निरीक्षण स्थलों पर यदि ध्यान न दिया जाये तो भी क्या दो तारे वास्तव में एक साथ में हैं। तथ्य यह है कि एक साथ घटित होना केवल उन दो घटनाओं पर ही निर्भर नहीं करता, बल्कि उस फ्रेम पर भी निर्भर करता है जहाँ से हम घटनाओं का निरीक्षण करते हैं, ठीक वैसे ही जैसे कि दो तारों का एक सीध में होना केवल उनकी स्थिति पर ही निर्भर नहीं करता, वल्कि उस बिन्दु पर भी निर्भर करता है जहाँ से कि उनका निरीक्षण किया जाता है।

जब तक हम ऐसे वेगों पर ही विचार करते रहे, जिनके मान प्रकाश के वेग की तुलना में नगण्य थे, तब तक हम समक्षणिकता संकल्पना की सापेक्षता से अपरिचित रहे। लेकिन जब हमने प्रकाश के वेग से तुलनीय वेगों की गति का परीक्षण किया, केवल तब ही हम समक्षणिकता की अपनी संकल्पना को पुनः परीक्षण करने के लिए बाध्य हुए।

इसी प्रकार से लोगों को 'ऊपर' और 'नीचे' की अपनी संकल्पना में भी सुधार करना पड़ा था, जब उन्होंने पृथ्वी पर दूर-दूर तक यात्रा प्रारम्भ की। उसके पहिले इस संकल्पना में कि पृथ्वी समतल है तथा उनके अनुभवों में कभी भी असामंजस्य उत्पन्न नहीं हुआ था।

यह सच है कि हम न तो प्रकाश के वेग के तुलनीय वेग से यात्रा कर सके हैं और न ही इन सारे तथ्यों का, जिनकी हमने अभी-अभी विवेचना की है और जिनका हमारी पुरानी संकल्पनाओं की दृष्टि से विरोधाभास था, निरीक्षण कर सके हैं। लेकिन आधुनिक प्रायोगिक तंत्रों के द्वारा हम

इन तथ्यों को अनेक भौतिक परि-घटनाओं के रूप में निर्णयात्मक ढंग से प्रगट करके दिखा सकते हैं।

इस प्रकार से काल अवकाश के भाग्य का सहभोगी है। इस प्रकार "एक ही समय" कहना उतना ही अर्थहीन है जैसा कि "एक ही स्थान पर" कहना अर्थहीन है।

स्पष्टतः दो घटनाओं के बीच का कालान्तर बताते समय, आकाश में उनके बीच की दूरी बताने के समान ही हमको उस फ्रेम का सन्दर्भ भी बताना आवश्यक है, जिसके सापेक्ष उसको निश्चित (defined) किया गया है।

विज्ञान की विजय होती है

काल सापेक्ष है—इस खोज ने प्रकृति के बारे में मनुष्य के विचारों में मौलिक परिवर्तन कर दिया है। शताब्दियों पुरानी पिछड़ी हुई संकल्पनाओं पर मनुष्य की बुद्धि की महानतम विजयों में से यह एक है। इसकी तुलना केवल विचारों के उस क्रान्तिकारी परिवर्तन से की जा सकती है जब मनुष्यों ने यह खोज की थी कि पृथ्वी गोल है।

सन् १६०५ में जब बीसवीं शताब्दी के महानतम भौतिक-विद्, अलबर्ट आइन्सटीन (१८८०–१९५५) ने, जो तब केवल २५ वर्ष के युवक थे, काल की सापेक्षता की खोज की तब वे भी कोपरनिकस, न्यूटन, जैसे अन्य महान विचारकों की श्रेणी में आ गये, जिन्होंने विज्ञान का मार्ग प्रशस्त किया है।

लेनिन ने अलबर्ट आइन्सटीन को 'प्राकृतिक विज्ञान के महान् परिवर्तकों' में से एक बताया था।

काल की सापेक्षता का सिद्धान्त और उसके उप प्रमेयों (Corollaries) को बहुधा सापेक्षता का विशिष्ट सिद्धान्त के नाम से पुकारा जाता है। इसमें तथा गति की सापेक्षता के नियम के बीच भ्रान्ति उत्पन्न नहीं होनी चाहिए। ये दोनों अलग-अलग हैं।

वेग की स्वयं की सीमाएँ हैं

द्वितीय विश्व-युद्ध के पूर्व वायुयानों की चाल ध्वनि की चाल से बहुत

कम थी । आज हमारे पास पराध्वनिक Supersonic वायुयान हैं । रेडियो तरंगों का संचार प्रकाश के वेग से होता है । क्या हम प्रकाश के वेग से भी अधिक वेगों से संकेतों को भेजने के लिये परा-प्रकाश तार-प्रणाली (Super-light telegraphy) का निर्माण कर सकते हैं ? नहीं यह एक असम्भव बात है, जो हम नहीं कर सकते ।

वास्तव में, यदि हम संकेतों को अनन्त वेगों से संचारित कर सकते होते, तो हम दो घटनाओं के एक साथ होने को समानार्थक रूप में स्थापित कर सकने योग्य हो जाते । यदि पहिली घटना के विषय में अनन्त तेजी से चलने वाला संकेत उसी क्षण हमारे पास पहुँचता, जब कि दूसरी घटना के विषय का संकेत हम तक पहुँचता है, तो हम कह देते कि ये दो घटनाएँ एक साथ घटित हुई है । ऐसा होने पर दो घटनाओं की समक्षणिकता एक ऐसा निरपेक्ष गुण हो जाता, जो उस प्रयोग-शाला; affirmation की गति पर निर्भर नहीं करता, जिसमें ऐसा अवलोकन किया गया था ।

लेकिन प्रयोग ने काल के निरपेक्ष स्वभाव को गलत सिद्ध किया है, अत: हम यह निर्णयात्मक रूप से कह सकते हैं कि संकेतों का संचारण एक ही क्षण पर नहीं हो सकता । आकाश में एक बिन्दु से दूसरे बिन्दु तक संकेत के संचारण का वेग अनन्त नहीं हो सकता, दूसरे शब्दों में उसका वेग एक सीमांत वेग (limiting Speed) से अधिक नहीं हो सकता । यह सीमांत वेग प्रकाश के वेग के तुल्य होता है ।

वास्तव में, गति की सापेक्षता के नियम के अनुसार प्रकृति के नियम सभी निर्देश-फ्रेमों के लिये, जो कि एक दूसरे के सापेक्ष सरल रेखा में और एक समान वेग से गतिशील हैं, एक से ही होंगें । यह कथन, कि कोई भी वेग इस सीमांत वेग से अधिक नहीं हो सकता, प्रकृति का ही नियम है और इसलिये सीमांत वेग का मान भिन्न-भिन्न निर्देश-फ्रेमों में एक समान होना चाहिये । हम जानते ही हैं, कि प्रकाश के वेग में ये गुण हैं । इस प्रकार प्रकाश का वेग केवल प्राकृतिक दृश्य-घटना के संचार का वेग ही नहीं है, बल्कि वह सीमांत वेग भी है ।

इस विश्व में सीमांत वेग के अस्तित्व की खोज, मानव-प्रतिभा की

महानतम खोजों में से एक है और मनुष्य जाति की प्रायोगिक क्षमता का प्रतीक है।

१९ वीं शताब्दी में भौतिक-विद् सीमांत वेग के अस्तित्व को समझ सकने और उसके अस्तित्व को सिद्ध कर सकने के अयोग्य थे। इसके अतिरिक्त, यदि वे अपने प्रयोगों में कहीं किसी घटना-वश इस तक भूल-चूक से पहुँच भी जाते तो भी वे यह विश्वास नहीं करते कि यह प्रकृति का एक नियम है और केवल उनकी सीमित प्रायोगिक क्षमता का ही परिणाम नहीं है।

आपेक्षिकता का नियम यह प्रकट करता है कि सीमान्त वेग का अस्तित्व, वस्तुओं की प्रकृति में ही समाया हुआ है। यह कल्पना करना कि शिल्प-विज्ञान के विकास से हम प्रकाश के वेग से अधिक वेगों को प्राप्त कर सकेंगे, ठीक वैसा ही उपहासास्पद है जैसा कि यह सुझाव देना कि पृथ्वी की सतह पर २० हजार किलोमीटर की दूरी वाले बिन्दुओं की अनुपस्थिति एक भौगोलिक नियम नहीं है, बल्कि हमारे सीमित ज्ञान का परिणाम है और यह आशा की जाये कि किसी दिन जब भूगोल का ज्ञान आगे बढ़ेगा तब हम पृथ्वी पर ऐसे बिन्दुओं को भी ढूंढ सकेंगे, जो इससे भी कहीं अधिक दूरी पर होंगे।

प्रकाश के वेग का प्रकृति में विशिष्ट महत्व इसलिये है, क्योंकि वह किसी भी वस्तु के संचार का सीमान्त वेग है। प्रकाश या तो दूसरी समस्त परि-घटनाओं से आगे निकल जाता है, या उनके साथ ही साथ पहुँचता है।

यदि सूर्य के दो खण्ड हो जायें और दो तारे बन जायें, तो पृथ्वी की गति में, स्वाभाविक रूप से, अवश्य ही परिवर्तन होगा।

१९ वीं शताब्दी का भौतिक-विद्, जो यह नहीं जानता था कि प्रकृति में सीमान्त वेग का अस्तित्व है, यह निश्चित रूप से मान लेता कि पृथ्वी की गति उसी क्षण बदल गई, जब सूर्य के दो खण्ड हुये। लेकिन प्रकाश को खण्डित सूर्य से पृथ्वी तक की दूरी पार करने में ही ८ मिनट लगते हैं।

पृथ्वी के घूमने की गति में परिवर्तन, सूर्य के खण्डित होने के ८ मिनट बाद प्रारम्भ होगा। उस क्षण तक पृथ्वी उसी प्रकार चलती रहेगी, जैसे कि वह सूर्य के खण्डित न होने पर चलती। सूर्य के साथ या उसके ऊपर किसी भी घटना

के घटित होने का प्रभाव पृथ्वी पर या उसकी गति पर ८ मिनट से पूर्व नहीं पड़ेगा।

संकेतों के संचार के सीमान्त वेग ने हमें दो घटनाओं के एक साथ घटित होने की सम्भावना से वंचित नहीं किया है। वास्तव में हमें संकेतों की काल-पश्चता (time lag) को नापना है। सामान्यतः व्यवहार में ऐसा ही किया जाता है।

क्रिया की समक्षणिकता स्थापित करने की यह विधि इस संकल्पना की सापेक्षता के साथ बिलकुल संगत है। वास्तव में, काल के अन्तर को निकालने के लिए हमको उन दोनों स्थानों, के बीच की दूरी को (प्रकाश) संकेत के वेग से भाग देना पड़ेगा, जहाँ पर घटनाएँ हुई थीं। दूसरी तरफ, जब हमने इसके पूर्व मास्को ब्लाडी वास्टक एक्सप्रेस गाड़ी से भेजे गये पत्रों की विवेचना की थी, तब हमने देखा था कि आकाश में किसी एक स्थान का निर्धारण करना भी बिलकुल सापेक्ष है।

पहिले और बाद में

हम यह कल्पना करें कि हमारी लेम्प वाली रेलगाडी में, जिसे हम आइन्सटीन-रेलगाड़ी के नाम से पुकारेंगे, स्वचालित साधन में कुछ विघ्न पड़ गया और रेलगाड़ी में लोगों को अगला दरवाजा, पिछले दरवाजे की अपेक्षा १५ सेकण्ड पूर्व खुलता हुआ दिखाई दिया। लेकिन प्लेटफार्म पर लोगों को पिछला दरवाजा ४० – १५ = २५ सैकण्ड पूर्व खुलता हुआ दिखाई देगा। इस प्रकार एक घटना जो कि फ्रेम में पहिले घटित हुई, दूसरे फ्रेम में बाद में घटी।

हमें ऐसा अनुभव हो सकता है कि 'पहिले' और 'बाद' की संकल्पनाओं की इस सापेक्षता की भी, स्वयं की सीमाएँ होनी चाहिए। वास्तव में इस बात की सम्भावना नहीं है कि (किसी भी फ्रेम को दृष्टिगत करते हुए) बच्चे का जन्म अपनी माता से पहिले हो।

मान लीजिये कि सूर्य पर एक धब्बा बना। उसे आठ मिनट बाद दूरबीन में से सूर्य का निरीक्षण करने वाले एक ज्योतिर्विद् ने देखा। ज्योतिर्विद् उसके बाद जो भी कार्य करेगा, वह धब्बे के प्रकट होने के बाद में ही होगा

चाहे किसी भी फ्रेम से सूर्य और ज्योतिर्विद् का निरीक्षण किया जाये । इसके विपरीत, प्रत्येक घटना जो ज्योतिर्विद् को धब्बे के प्रकट होने के ८ मिनट पूर्व से पहिले घटती हुई दिखती है, (अर्थात धब्बा प्रकट होने के पहिले इस घटना का प्रकाश-संकेत का पृथ्वी तक पहुँचना) निरपेक्ष रूप से पहिले ही घटी है ।

उदाहरणार्थ, यदि ज्योतिर्विद् इन दो सीमाओं के बीच किसी क्षण अपना चश्मा पहिनता है, तो धब्बा प्रकट होने और चश्मा पहिनने के बीच के काल का सम्बन्ध अब निरपेक्ष नहीं रहेगा ।

हम ज्योतिर्विद् और सूर्य के धब्बे के सापेक्ष इस प्रकार चल सकते हैं कि हमको वह ज्योतिर्विद् अपना चश्मा पहिनते हुए या तो धब्बे के प्रकट होने से पहिले या बाद में या उसी समय दिखाई दे, यह सब हमारी चाल और हमारी गति की दिशा पर निर्भर करेगा ।

सापेक्षता का नियम इस प्रकार यह प्रदर्शित करता है कि घटनाओं के बीच तीन प्रकार के काल-सम्बन्धों का अस्तित्व है— निरपेक्ष रूप से पहिले, निरपेक्ष रूप से बाद में, और न तो पहिले न बाद में, या अधिक यथार्थ रूप से— पूर्व या पश्चात के सम्बन्धों का उस फ्रेम पर निर्भर होना, जिससे कि घटनाओं का निरीक्षण किया गया ।

●

पंचम खण्ड

मनमौजी घड़ियाँ और पैमाने (स्केल)

हम पुनः रेलगाड़ी पर सवार होते हैं।

हम आइन्सटीन-रेलगाड़ी में सवार हैं, जो एक अनन्त रेल-पथ पर चल रही है। दो स्टेशनों के बीच की दूरी ८६,४,०००००० किलोमीटर है। रेलगाड़ी को २४०,००० कि०मी० प्रति सैकण्ड की चाल से चलकर इस दूरी को पार करने में एक घण्टा लगेगा।

दोनों स्टेशनों पर घड़ियाँ हैं। पहिले स्टेशन पर रेलगाड़ी में सवार होने वाले एक यात्री ने अपनी घड़ी स्टेशन की घड़ी से मिला ली। दूसरे स्टेशन पर पहुँचने पर उसे यह जानकर आश्चर्य होता है कि उसकी घड़ी पीछे है, लेकिन मरम्मत वाली दुकान पर उसे बताया गया था कि उसकी घड़ी अच्छी दशा में थी।

फिर कारण क्या है ?

इसका पता लगाने के लिए हम यह मानें कि यात्री ने गाड़ी के फर्श पर रखी हुई एक टार्च से एक किरणावली छत की तरफ भेजी। छत पर एक दर्पण उस किरणावली को वापिस टार्च के प्रकाश की तरफ परावर्तित कर देता है। किरणावली का मार्ग, जैसा कि यात्री के द्वारा देखा गया, इस पृष्ठ पर दिये

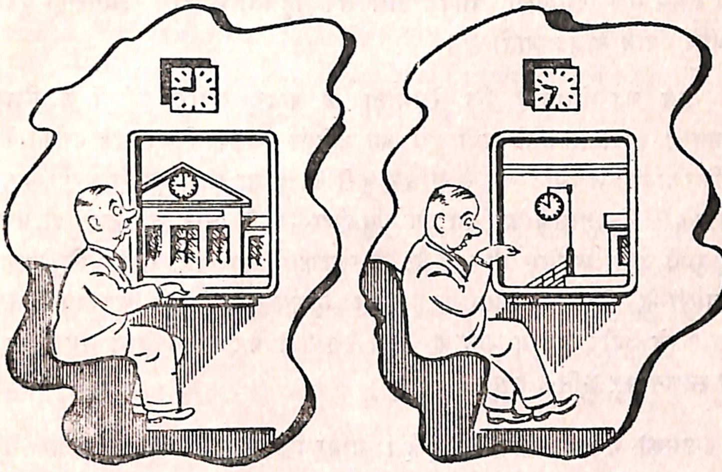

चित्र १४

हुए चित्र के ऊपरी खण्ड में दिखाया गया है। लेकिन प्लेटफार्म पर से देखने वाले को यह बिल्कुल भिन्न दिखाई देता है। जितने समय में किरणावली टार्च से दर्पण तक पहुँचती है, दर्पण स्वयं रेलगाड़ी की गति के कारण हट जाता है।

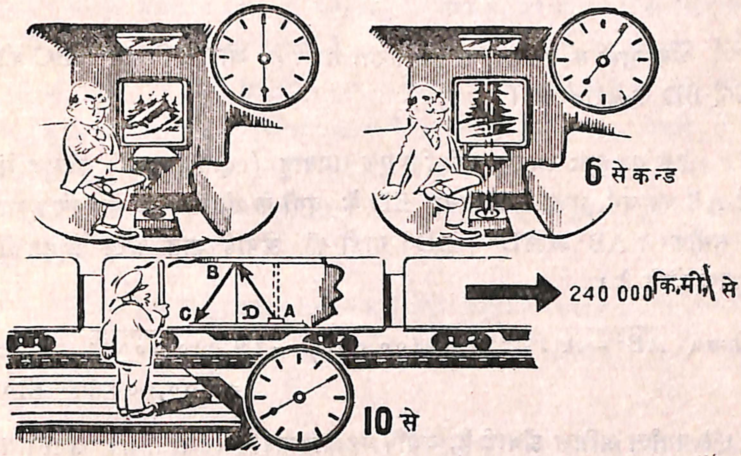

चित्र १५

जितने समय में किरणावली वापिस टार्च तक पहुँचती है, टार्च उतनी ही दूरी तक अपने स्थान से हट जाती है।

हम यह देखते हैं कि रेलगाड़ी के अन्दर सवार दर्शकों के लिए किरणावली द्वारा तय की गयी दूरी की अपेक्षा प्लेटफार्म पर खड़े दर्शकों के लिए किरणावली ने स्पष्ट रूप से अधिक दूरी की यात्रा की। दूसरी तरफ, हम यह जानते हैं कि प्रकाश का वेग एक निरपेक्ष-वेग है और वह रेलगाड़ी पर सवार रहने वालों के लिए भी वही है, जो प्लेटफार्म पर खड़े रहकर निरीक्षण करने वालों के लिए है। इसलिए हम यह निर्णय लेते हैं कि किरणावली के प्रस्थान करने और वापस आने के बीच रेलगाड़ी पर लगने वाले समय की अपेक्षा स्टेशन पर अधिक समय लगा।

इसकी गणना करना सरल है। माना कि प्लेटफार्म पर खड़े दर्शक ने यह पाया कि किरणावली के प्रस्थान करने और वापसी के बीच १० सैकण्ड व्यतीत हुए। इन १० सैकण्डों में किरणावली ने ३००,०००×१० = ३०,००,००० किलोमीटर की यात्रा की। परिणाम यह निकला कि समद्विबाहु त्रिभुज ABC की भुजाएँ AB तथा BC प्रत्येक १५००००० किलोमीटर है। AC स्पष्टतया उस दूरी के बराबर है, जो कि रेलगाड़ी ने १० सैकण्ड में तय की अर्थात् २४०,०००×१० = २४,००,००० किलोमीटर।

अब गाड़ी की ऊँचाई मालूम करना सरल है, जो कि त्रिभुज ABC की ऊँचाई BD के बराबर है।

हम यह पुनः स्मरण करें कि एक समबाहु (equilateral) त्रिभुज में कर्ण AB का वर्ग, भुजा AD तथा BD के वर्गों के योगफल के बराबर होता है। समीकरण $AB^2 = AD^2 + BD^2$ गाड़ी की ऊँचाई ज्ञात करने में हमको सहायक होता है।

$$BD = \sqrt{AB^2 - AD^2} = \sqrt{(१,५००,०००)^2 - (१,२००,०००)^2}$$

$$= ९००,००० \text{ कि० मी०}$$

यह एक पर्याप्त अधिक ऊँचाई है, यद्यपि यह आइन्सटीन-रेलगाड़ी की खगोलीय लम्बाईयों को ध्यान में रखकर, बहुत आश्चर्यजनक नहीं है।

यात्री के दृष्टिकोण से किरणावली के द्वारा फर्श से छत तक और फिर वापसी में तय किया गया मार्ग स्पष्टतया ऊँचाई से दुगुना है, अर्थात् ९००,००० × २ = १,८००,००० किलोमीटर है। किरणावली को यह दूरी चलने में १८०००००÷३००००० = ६ सैकण्ड लगेंगे।

घड़ियों का विरोधाभास

जबकि रेल्वे स्टेशन पर दस सैकण्ड व्यतीत हुए, तब रेलगाड़ी पर केवल ६ सैकण्ड ही व्यतीत होते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि यदि रेलगाड़ी स्टेशन की घड़ी के अनुसार अपने प्रस्थान के एक घंटा बाद पहुँची, तो यात्री की घड़ी के अनुसार वह केवल ६० × ६/१० = ३६ मिनिट चली। दूसरे शब्दों में, प्रत्येक घंटे में उसकी घड़ी स्टेशन की घड़ी से २४ मिनिट पीछे हो जायेगी।

यह सरलता से देखा जा सकता है कि रेलगाड़ी की चाल जितनी अधिक होगी, उतना ही अधिक यह अन्तर होगा।

वास्तव में, रेलगाड़ी की चाल प्रकाश की चाल के जितना अधिक निकट पहुँचती जाती है, उतना ही अधिक भुजा AD, जो रेलगाड़ी का मार्ग दर्शाती है, उसी समय में किरणावली के द्वारा तय किये हुए मार्ग को दर्शाने वाले कर्ण AB के तुल्य होती जाती है। भुजा BD का कर्ण से सम्बन्ध तदनुसार घटता जाता है। तो भी यही वह सम्बन्ध है, जो प्लेटफार्म से रेलगाड़ी के काल-सम्बन्ध का निरूपण करता है। रेलगाड़ी की चाल को बढ़ाकर उसे प्रकाश की चाल तक पहुँचाते हुए, हम रेलगाड़ी में लगने वाले समय को एक अनन्त सूक्ष्म अंक प्रति घंटा (स्टेशन-काल के अनुसार) तक घटा सकते हैं। उदाहरणार्थ, प्रकाश की चाल के ०·९९९९ के बराबर चाल से यात्रा करने पर स्टेशन-काल के अनुसार एक घंटा लगने पर रेलगाड़ी पर केवल एक मिनिट व्यतीत होगा।

परिणामस्वरूप, समस्त यात्रा करती हुई घड़ियाँ विराम-स्थिति वाली घड़ियों से पीछे रह जाती हैं। क्या यह बात सापेक्षता के नियम का विरोध करती है?

क्या इसका अर्थ यह होगा कि वह घड़ी, जो सब घड़ियों की अपेक्षा अधिक तेजी से चल रही है, निरपेक्ष विराम की स्थिति में है?

नहीं, यह बात नहीं है, क्योंकि रेलगाड़ी के अन्दर वाली घड़ी और स्टेशन की घड़ी के बीच की तुलना नितान्त असमान परिस्थितियों में की गई थी। वास्तव में वहाँ दो नहीं बल्कि तीन घड़ियाँ थी। यात्री ने दो भिन्न घड़ियों से दो भिन्न स्टेशनों पर अपनी घड़ी के समय की जाँच की। इसके विपरीत, यदि रेलगाड़ी के अगले और पिछले डब्बों में घड़ियाँ होतीं तो दर्शक को स्टेशन की घड़ी का मिलान दौड़ती हुई रेलगाड़ी वाली घड़ियों से करने पर पता चलता कि स्टेशन की घड़ी हमेशा पीछे रहती है।

यदि रेलगाड़ी स्टेशन सापेक्ष एक सरल रेखा में एक समान वेग से चल रही है, तो हम उसे स्थिर और स्टेशन को गतिशील मान सकते हैं। अतः उनमें प्रकृति के एकसे नियम लागू होना चाहिए।

प्रत्येक दर्शक, जो अपनी घड़ी के सापेक्ष गतिहीन है, यह देखेगा कि उसके सापेक्ष गतिशील दूसरी घड़ियाँ तेजी से चल रही हैं, और जैसे-जैसे उनकी गति बढ़ती जाती है, वैसे-वैसे घड़ियाँ अधिक तेज चलती जाती हैं।

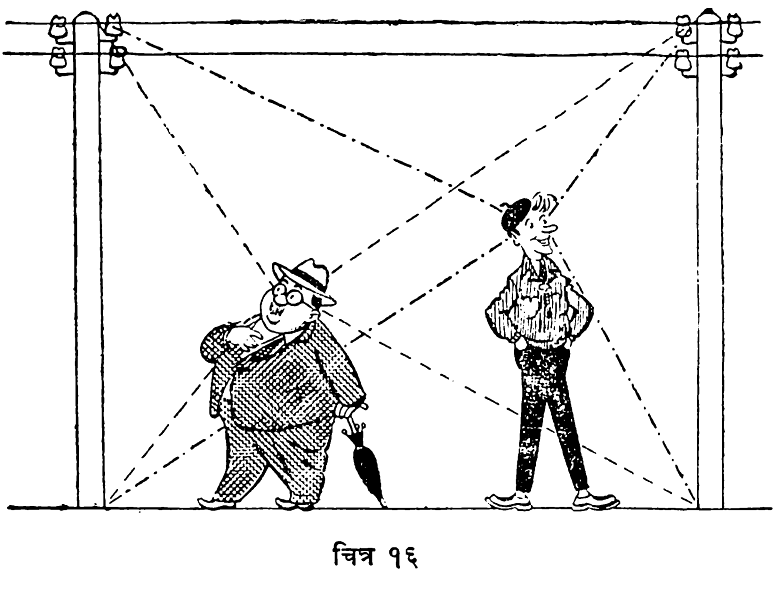

चित्र १६

इसकी तुलना भिन्न-भिन्न तार के खम्भों के पास खड़े हुए दो दर्शकों से

की जा सकती है, जिनमें प्रत्येक यह दावा करता है कि उसके द्वारा देखा जाने वाला खम्भा दूसरे की अपेक्षा अधिक कोण से देखा गया है।

काल-मशीन

अब हम यह मानें कि आइन्सटीन-रेलगाड़ी एक वृत्ताकार रेल-पथ पर चल रही है न कि सीधे रेल-पथ पर। अतः वह एक निश्चित समय बाद अपने प्रस्थान-बिन्दु पर वापिस आ जायेगी। जैसा कि हम पहिले ही स्थापित कर चुके हैं। यात्री को पता चलेगा कि उसकी घड़ी धीमी है और रेलगाड़ी जितना अधिक तेज चलेगी उतनी ही अधिक धीमी उसकी घड़ी हो जायेगी। रेलगाड़ी की चाल बढ़ाते हुए एक ऐसी स्थिति भी आ सकती है, जब यात्री का जो केवल एक दिन व्यतीत हो, लेकिन स्टेशन-मास्टर के लिए कई वर्ष बीत जायें। वास्तव में, इतने अधिक वर्ष बीत सकते हैं कि अपनी स्वयं की घड़ी के अनुसार एक दिन की यात्रा के बाद प्रस्थान वाले स्टेशन पर वापिस आकर हमारे यात्री को यह पता चले कि उसके सारे सम्बन्धी और बहुत पहिले ही मर चुके हैं।

इस वृत्ताकार रेल-पथ पर यात्रा करने में केवल दो घड़ियों के समय की तुलना की गई है – एक घड़ी रेलगाड़ी में थी और दूसरी प्रस्थान करने वाले स्टेशन पर थी।

क्या इसमें कोई बात ऐसी है जो सापेक्षता के नियम का विरोध करती है? क्या हम तह मान सकते हैं कि यात्री विराम-स्थिति में है और प्रस्थान करने का स्टेशन आइन्सटीन-रेलगाड़ी की चाल से वृत्ताकार-पथ पर गतिशील है? ऐसा मानने पर हम इस निर्णय पर पहुँचेगे कि स्टेशन पर लोगों के लिए केवल एक दिन व्यतीत हुआ, जबकि रेलगाड़ी पर यात्रियों के लिए अनेक वर्ष बीत गये। लेकिन यह एक गलत अनुमान होगा। इसका कारण निम्नलिखित है।

हम ऊपर स्थापित कर चुके हैं कि एक पिण्ड को केवल तभी स्थिर माना जा सकता है जब उस पर किसी बाहरी बल क्रियाशील न हो। यह सच है कि विराम की स्थिति, एक से अधिक है। उनकी संख्या अनन्त है, और जैसा कि हम जानते हैं, दो स्थिर पिण्ड एक दूसरे के सापेक्ष सरल रेखा में और एक

समान गति से चल सकते हैं। लेकिन वृत्ताकार रेलपथ पर दौड़ती हुई आइन्सटीन-रेलगाड़ी के अन्दर वाली घड़ी अपकेन्द्री (centrifugal) बल के प्रभाव को अनुभव करती है, और इसलिए हम उसे विराम की स्थिति में नहीं मान सकते। स्टेशन की घड़ी और रेलगाड़ी के अन्दर वाली घड़ी के पाठ्यांकों (readings) के बीच का अन्तर निरपेक्ष है।

यदि दो मनुष्य, जिनकी घड़ियाँ एक-सा समय बताती हैं, बिछुड़ जायें और बाद में फिर मिलें, तो विराम-स्थिति में रहने वाले या एक समान और सरल-रेखीय गति से चलने वाले मनुष्य की घड़ी तेज चलती हुई होगी, क्योंकि उस पर किसी भी बल का प्रभाव नहीं पड़ा।

वृत्ताकार रेल-पथ पर प्रकाश की चाल के निकट वाली किसी चाल से यात्रा करने पर हम एच. जी. वेल्स (H. G. Wells) की काल-मशीन का प्रत्यक्षीकरण कर सकते हैं, परन्तु केवल एक सीमित स्थिति तक ही, क्योंकि यात्रा के अन्त में अपने प्रस्थान के स्टेशन पर वापस आकर हम दूर भविष्य में पहुँच जायेंगे। हम रेलगाड़ी से भविष्य में तो पहुँच सकते हैं, लेकिन हम अपने भूतकाल में वापिस नहीं जा सकते। आइन्सटीन-रेलगाड़ी और वेल्स की काल-मशीन में यही एक बड़ा भेद है।

यह आशा करना व्यर्थ है कि हम कभी भूतकाल में यात्रा करने योग्य हो सकेंगे, चाहे विज्ञान कितनी भी उन्नति क्यों न करले। यदि ऐसा सत्य हो जाय, तो हमको यह स्वीकार करने के लिए बाध्य होना पड़ेगा कि सिद्धान्त: बड़ी बेतुकी परिस्थितियाँ सम्भव हैं। जरा इस स्थिति की कल्पना कीजिये कि एक मनुष्य भूतकाल में चला जाय और ऐसी बेतुकी स्थिति में उतरे, जब उसके माता-पिता भी पैदा न हुए हों।

दूसरी ओर, भविष्य तक ले जाने वाली यात्रा हमें केवल आभासी विरोधों में ही फांसती है।

एक तारे तक की यात्रा

आकाश में ऐसे तारे भी हैं, जो हमसे इतनी दूर हैं कि प्रकाश-किरण को उन तक पहुँचने में ४० वर्ष लगते हैं। क्योंकि हम पहिले से जानते हैं

कि प्रकाश की चाल से, अधिक चाल से यात्रा करना असम्भव है। अतः हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं, कि तारे तक ४० वर्ष से कम समय में नहीं पहुँचा जा सकता। तथापि यह अनुमान गलत है क्योंकि हमने गति के कारण काल-संकुचन (contraction) का विचार नहीं किया।

मान लीजिये कि हम एक आइन्सटीनी-रॉकेट में तारे तक २४०,००० किलोमीटर प्रति सैकण्ड की चाल से उड़ते हैं।

पृथ्वी के मनुष्यों के लिए हम तारे तक ३००,००० × ४० / २४०,००० = ५० वर्षों में पहुँचेगे।

लेकिन रॉकेट पर सवार व्यक्तियों के लिए इस चाल से उड़ने पर काल १०:६ के अनुपात में सिकुड़ जायेगा। इसलिए हम तारे तक ६/१० × ५० = ३० वर्षों में पहुँच जायेंगे, न कि ५० वर्षों में।

हम आइन्सटीन-रॉकेट की चाल को बढ़ाते हुए उसे प्रकाश की चाल तक पहुँचाकर इस उड़ान-काल को घटा सकते हैं। सिद्धान्ततः, पर्याप्त अधिक

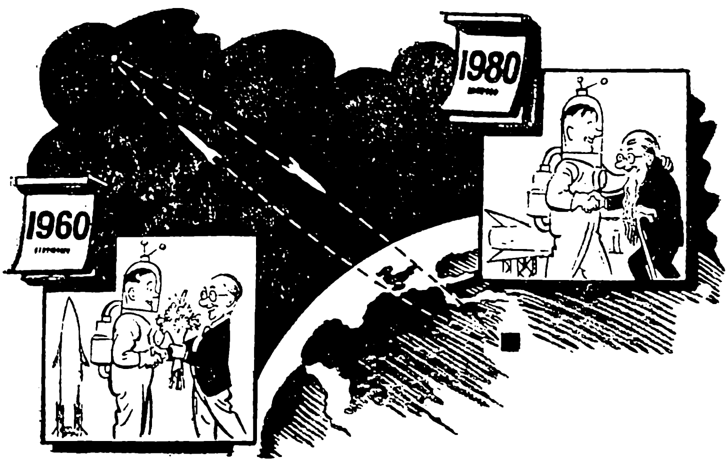

चित्र १७

चाल से यात्रा करके हम एक मिनिट में ही तारे तक पहुँचकर पृथ्वी पर वापस आ सकते हैं। लेकिन पृथ्वी पर इस बीच ८० वर्ष व्यतीत हो जायेंगे।

इस प्रकार ऊपरसे देखने पर हमें मनुष्य जीवन को लम्बा बनाने का एक साधन मिल जाता है, यद्यपि ऐसा दूसरे लोगों के दृष्टि-कोण से ही होगा, क्योंकि मनुष्य 'अपने' स्वयं के काल के अनुसार आयु व्यतीत करता है। तथापि यदि हम इसे अधिक बारीकी से देखें तो यह आशा भ्रामक लगेगी।

पहिला कारण यह है कि मनुष्य का शरीर पृथ्वी के गुरुत्व-बल के कारण उत्पन्न त्वरण से बहुत अधिक त्वरण को अधिक समय तक लगातार सहने की स्थिति के अनुकूल नहीं है। साथ ही प्रकाश की चाल के निकट वाली चालों तक त्वरायित (accelerate) करने लिये बहुत अधिक समय भी लगेगा। गणना से पता चलता है कि पृथ्वी के त्वरण के बराबर त्वरण से ६ महिने की यात्रा करने में हमारा लाभ केवल ६ सप्ताहों का ही होगा। यदि हम अपनी यात्रा को लम्बी बनायें, तो काल में लाभ तीवृता से बढ़ेगा। उड़ते हुए रॉकेट में १२ महीने की यात्रा से समय में १८ महीने का अतिरिक्त लाभ होगा, २ वर्षों की यात्रा २८ वर्षों का लाभ देगी, और यदि हम अन्तराग्रहिक (inter-planetery) यात्रा में ३ वर्ष बितायें, तो हमें ३६० वर्षों से अधिक का लाभ होगा।

बहुत आनन्ददायक आँकड़ें हैं ये, हैं न ?

लेकिन यही बात कम आनन्ददायक हो जाती है, जब हम ऊर्जा के खर्चें को देखते हैं। राकेट की २६०००० किलोमीटर प्रति सैकण्ड की चाल, काल को दुगुना बनाने के लिये आवश्यक चाल है, अर्थात् राकेट में एक वर्ष पृथ्वी पर दो वर्षों के बराबर हों। इस चाल से उड़ता हुआ एक टन भार वाला राकेट २५०,०००,०००,०००,००० किलोवाट-घण्टे ऊर्जा का उपभोग है– यह एक ऐसी राशि है, जितनी ऊर्जा विश्व में कई महीनों में बन पाती है।

तथापि, यह तो केवल वह राशि है, जो कि राकेट उड़ान में उपभोग करता है। हमको अभी भी इसका आँकड़ा मालूम करना है कि कितनी शक्ति हमारे यान को २६०००० किलोमीटर प्रति सैकण्ड की चाल तक त्वरायित करने में लगती है। इसके अतिरिक्त कुछ शक्ति की आवश्यकता इस आकाश-यान को उड़ान के अन्त में सुरक्षित उतारने के लिए मन्दन करने में लगेगी। इसमें कितनी शक्ति की आवश्यकता होगी ?

जो राशि हमने ऊपर बताई है उससे भी २०० गुनी राशि इसमें लगेगी, यदि हमारे पास इंजन को उच्चतम सम्भव चाल– प्रकाश की चाल– से दौड़ाने वाले जेट को तैयार करने के लिए पर्याप्त ईंधन हो। दूसरे शब्दों में, हम शक्ति की एक ऐसी राशि का उपभोग करेंगे, जो विश्व कई दर्जन वर्षों में तैयार कर पाता है। वास्तव में जेट द्वारा दौड़ाने पर प्राप्त वेग प्रकाश की चाल की अपेक्षा हजारों गुना कम है, और इस कारण हमारी काल्पनिक उड़ान के लिए आवश्यक शक्ति का खर्च बहुत ही अधिक है।

लम्बाई का संकुचन

जैसा कि हमने अभी देखा, काल वास्तव में एक निरपेक्ष संकल्पना नहीं है। वह सापेक्ष है और यह अपेक्षित है कि जिस फ्रेम से निरीक्षण किया गया हो, उस फ्रेम का संकेत दिया गया हो।

अब हम आकाश पर विचार करें। हमने माइकलसन के प्रयोग की विवेचना करने से पहिले ही यह जान लिया था कि आकाश सापेक्ष है। तो भी, आकाश की सापेक्षता जानते हुए भी हमने पिण्डों की विमितियों (dimensions) को एक निरपेक्ष गुण प्रदान कर दिया। दूसरे शब्दों में, हमने उन्हें पिण्ड के ऐसे गुण मान लिये जो उस फ्रेम पर निर्भर नहीं करते, जहाँ से हमने निरीक्षण

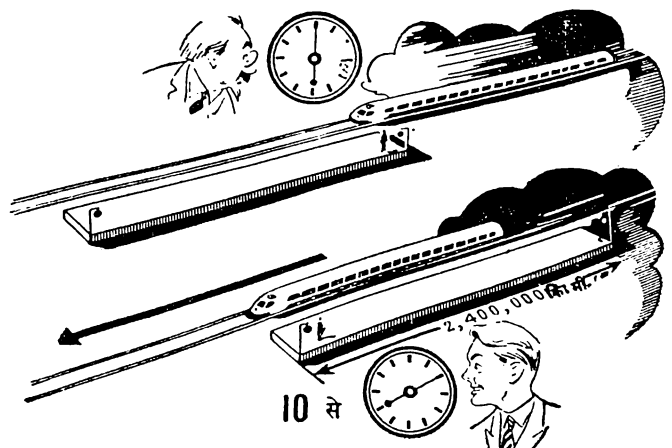

चित्र १८

किया था। तथापि, सापेक्षता के सिद्धान्त ने हमें इस धारणा का परित्याग करने पर मजबूर किया। काल के बारे में निरपेक्ष होने की हमारी संकल्पना के समान, यह भी एक गलत धारणा हमने विकसित कर ली थी, क्योंकि हमें हमेशा ऐसी चालों से ही वास्ता पड़ता है, जो प्रकाश की चाल की तुलना में बहुत ही कम हैं।

हम कल्पना करें कि आइन्सटीन-रेलगाड़ी एक २,४००,००० किलोमीटर लम्बे स्टेशन-प्लेटफार्म पर से दौड़ती हुई गुजरती है। वह रेलगाड़ी स्टेशन की घड़ी के अनुसार प्लेटफार्म के एक सिरे से दूसरे सिरे तक २,४००,००० ÷ २४०,००० = १० सेकण्ड में जाती है। लेकिन यात्री की घड़ी के अनुसार रेलगाड़ी को इसमें केवल ६ सेकण्ड लगे। यात्रियों का यह निष्कर्ष निकाल लेना

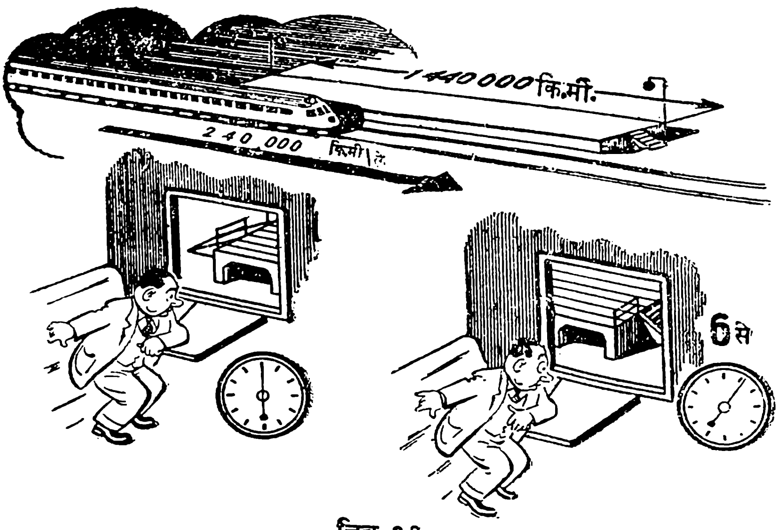

चित्र १९

कि प्लेटफार्म की लम्बाई २,४००,००० कि०मी० नहीं है, बल्कि २४०,००० × ६ = १,४४०,००० कि० मी० है, पूर्णतया न्याय-संगत होगा।

स्पष्ट है कि उस फ्रेम से नापने पर, जिसके सापेक्ष कि प्लेटफार्म गतिशील है, प्लेटफार्म की लम्बाई उस दूसरी फ्रेम के दृष्टिकोण से देखने पर

अधिक होगी, जो प्लेटफार्म सापेक्ष स्थिर है। अतः समस्त गतिशील पिण्डों का उनकी गति की दिशा में संकुचन होता है।

तथापि, यह संकुचन इस बात को कतई सिद्ध नहीं करता कि गति निरपेक्ष है। वह पिण्ड अपनी वास्तविक विमितियों को तुरन्त प्राप्त कर लेता है, जैसे ही हम उसे एक ऐसे फ्रेम से देखते हैं, जो पिण्ड के सापेक्ष स्थिर हो। इस प्रकार यात्रियों को ज्ञात होगा कि प्लेटफार्म का संकुचन हो गया है, जबकि प्लेटफार्म पर खड़े लोग सोचेंगे कि आइन्सटीन-रेलगाड़ी ही (६:१० के अनुपात में) अधिक छोटी हो गयी है।

यह एक दृष्टि-भ्रम (optical illusion) भी नहीं होगा। पिण्ड की लम्बाई मापने के लिए प्रयोग में आने वाले सारे यंत्र भी यह बात बतायेंगे।

इस खोज की दृष्टि से अब हम आइन्सटीन-रेलगाड़ी में दरवाजे खुलने के लिए लगने वाले समय के विषय में अपने पूर्व-निर्मित अनुमानों को सही कर लें। जब हमने उस काल की गणना की थी, जो प्लेटफार्म पर खड़े एक दर्शक के दृष्टिकोण से दरवाजे खुलने में लगा, तब हमने यह मान लिया था कि गतिशील रेलगाड़ी की लम्बाई वही है, जो कि स्थिर रेलगाड़ी की है। लेकिन वास्तव में प्लेटफार्म पर खड़े लोगों के लिए रेलगाड़ी की लम्बाई कम हो जायेगी। तदनुसार, स्टेशन की घड़ी के अनुसार दरवाजे खुलने के बीच का कालान्तर वास्तव में केवल ४०×६/१० = २४ सेकण्ड होगा न कि ४० सेकण्ड। यह संशोधन उन निष्कर्षों के लिए आवश्यक नहीं है, जो हमने इसके पहिले निकाले हैं।

चित्र २० में आइन्सटीन-रेलगाड़ी और स्टेशन-प्लेटफार्म को दिखाया गया है, जैसा दर्शकों को स्टेशन पर से और रेलगाड़ी पर से दिखाई देगा।

हम देखते हैं कि चित्र २० के दाहिने चित्र में प्लेटफार्म रेलगाड़ी से अधिक लम्बा है, और बाँये चित्र में रेलगाड़ी प्लेटफार्म से अधिक लम्बी है।

इन चित्रों में से कौन-से चित्र का वास्तविकता से मेल है ?

यह प्रश्न उसी प्रकार अर्थहीन है, जैसा कि ग्वाले और गाय के विषय में किया गया प्रश्न था। (पृष्ठ ११)

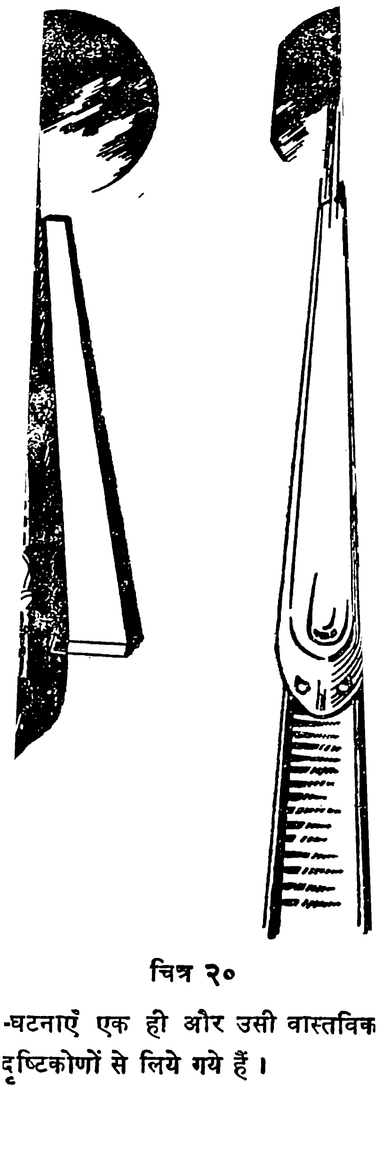

चित्र २०

-घटनाएं एक ही और उसी वास्तविक
दृष्टिकोणों से लिये गये हैं।

तल के सापेक्ष उस यात्रा की चाल व
ही चाल से यात्रा करती हुई, एक रेलगा

५ किलोमीटर प्रति घण्टे की चाल से चलने लगता है ? स्पष्टतया यह ५० + ५ = ५५ कि० मी० प्रति घण्टा होगी। हमारा उत्तर वेगों के योग-सूत्र पर आधारित है और हमें इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है कि यह सही है। वास्तव में रेलगाड़ी ने ५० कि० मी० की यात्रा एक घण्टे में कर ली होगी और उस पर सवार मनुष्य ने अतिरिक्त ५ कि० मी० चल लिये होंगे। इसलिये ५५ कि० मी० का योगफल हुआ।

यह स्पष्ट है कि सीमान्त चाल का अस्तित्व होना, वेगों के योग करने के नियम को छोटी और बड़ी सभी चालों के लिये सर्वमान्य रूप से लागू न होने योग्य बना देता है। यदि यात्री आइन्सटीन-रेलगाड़ी के अन्दर १००,००० कि० मी० प्रति सेकण्ड की चाल से चल रहा हो, तो रेल-पथ के तल के सापेक्ष उसकी चाल २४०००० + १००००० = ३४,०००० कि० मी० प्रति सेकण्ड हो जाना चाहिये। लेकिन ऐसी किसी चाल का अस्तित्व नहीं है, क्योंकि यह प्रकाश की चाल से अधिक हो जाती है।

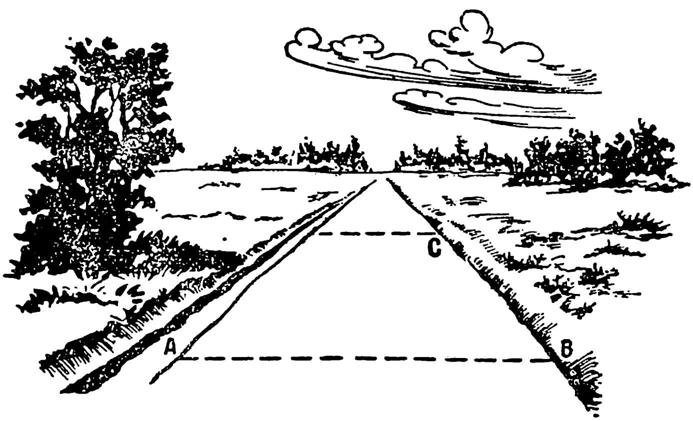

चित्र २१

परिणामस्वरूप, वेगों के योग का नियम, जिसका प्रयोग हम प्रतिदिन करते हैं, पूर्णतया परिशुद्ध नहीं है। यह केवल प्रकाश की चाल की तुलना में बहुत अधिक कम मान की चालों के लिये ही लागू होता है।

पाठक, जो अब तक आपेक्षिकीय सिद्धान्त से सम्बन्धित सब प्रकार के विरोधाभासों का अभ्यस्त हो गया है, सरलता से समझ लेगा कि ऊपर से दिखने में स्पष्ट तर्क, जिससे हमने वेगों का योग करने के नियम को अभी-अभी निकाला है, क्यों अपर्याप्त हो जाता है। हमने रेलगाड़ी के द्वारा एक घण्टे में चली हुई दूरी और रेलगाड़ी पर सवार यात्री के द्वारा चली हुई दूरी को जोड़ दिया। तथापि, आपेक्षिकता के सिद्धान्त से यह सिद्ध हुआ कि ये दूरियाँ जोड़ी

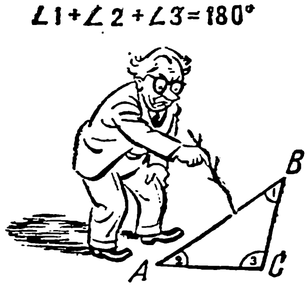

चित्र २२-a

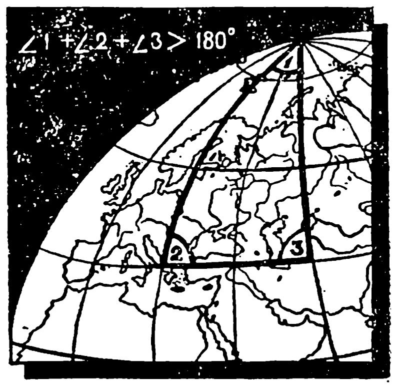

चित्र-२२ b

नहीं जा सकतीं। ऐसा करना उतना ही बेतुका होगा, जितना कि चित्र २१ में दिखाई गयी सड़क के खण्ड (Section) का क्षेत्रफल मालूम करने के लिए हम AB में BC से गुणा कर दें और यह भूल जायें कि दृष्टिकोण के कारण चित्र में सड़क विकृत दिखती है। इसके अतिरिक्त, स्टेशन के सापेक्ष यात्री की चाल प्राप्त करने के लिए, हमें स्टेशन की घड़ी के अनुसार एक घण्टे में उसके द्वारा चली हुई दूरी ज्ञात करनी पड़ेगी, और रेलगाड़ी में उसकी चाल मालूम करने के लिए हमें रेलगाड़ी की घड़ी का प्रयोग करना पड़ेगा, और जैसा कि हम जानते ही हैं, ये दोनों घड़ियाँ एक-सी नहीं चलती।

इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि वेगों का योग हमारी सामान्य रीति से बिलकुल भिन्न किसी दूसरी रीति से करना पड़ता है, यदि उनमें से कम से

कम एक का मान प्रकाश के वेग से तुलनीय हो। हम वेगों के इस विरोधाभासी योग का, प्रयोग के द्वारा निरीक्षण कर सकते हैं, उदाहरणार्थ, बहते हुए पानी में से प्रकाश के संचार का निरीक्षण (हम इसकी विवेचना पहिले कर चुके हैं)। यह तथ्य कि बहते हुए पानी में प्रकाश के संचार का वेग, शान्त पानी में प्रकाश के वेग और बहते हुए पानी के वेग के जोड़ के बराबर नहीं है, बल्कि उनके जोड़ से कुछ कम है, आपेक्षिकता के सिद्धान्त का ही फल है।

वेगों को अत्यन्त अद्‌भुत ढंग से जोड़ा जाता है, यदि उनमें से एक का मान ३००,००० कि० मी० प्रति सेकण्ड हो। जैसा कि हम जानते हैं, यह वेग उन फ्रेमों की गति पर आश्रित नहीं रहता, जिन पर से हम उसका निरीक्षण करते हैं। दूसरे शब्दों में, यदि हम ३००,००० कि० मी० प्रति सेकण्ड में किसी भी वेग को जोड़ें, तो हमको पुनः वही ३००,००० कि० मी० प्रति सेकण्ड ही प्राप्त होगा।

वेगों के योग के सामान्य नियम के लागू न हो सकने के सन्दर्भ में एक सरल समरूप उदाहरण दिया जा सकता है।

जैसा कि आप जानते हैं, एक समतल त्रिभुज में (चित्र २२ (a) देखिये) कोण A, B और C का योग दो समकोणों के बराबर होता है। अब हम पृथ्वी की सतह पर खींचे गये एक त्रिभुज की कल्पना करें (चित्र २२ (b) देखिये)। इस त्रिभुज के कोणों का योग पृथ्वी की गोलाई के कारण दो सम-कोणों से अधिक होगा। यह अन्तर केवल तब ही दृष्टिगोचर होता है, जब त्रिभुज का आकार पृथ्वी के आकार से तुलनीय हो।

नगण्य चालों से वास्ता पड़ने पर हम वेगों के योग के सामान्य नियम का प्रयोग कर सकते हैं, ठीक वैसे ही जैसे समतल ज्यामिति के नियम पृथ्वी की सतह के छोटे क्षेत्रों को मापने में लागू करना सम्भव है।

षष्टम खण्ड

संहति

संहति (Mass)

मान लीजिये कि हम किसी जड़ पिण्ड को एक निश्चित चाल से चलाना चाहते हैं। हमको उस पर एक निश्चित बल लगाना पड़ेगा। पिण्ड गति में आ जायेगा और कुछ समय में किसी वांछित वेग तक त्वरित हो सकेगा, यदि उसे रोकने के लिये घर्षण सरीखा कोई बाहरी बल न हो। हम यह पायेंगे कि भिन्न-भिन्न पिण्डों को एक निश्चित बल की सहायता से वांछित वेग तक त्वरित करने के लिए भिन्न-भिन्न-कालान्तरों (time-intervals) की आवश्यकता होती है।

घर्षण-बल की उपेक्षा कर, हम कल्पना करें कि आकाश में दो गोले हैं, जो आकार में समान हैं, एक सीसे का बना हुआ है और दूसरा लकड़ी का। हम उनमें से प्रत्येक पर समान बल तब तक लगायें, जब तक कि वे दस कि० मी० प्रति घन्टे की चाल तक त्वरायित न हो जायें।

स्पष्टतय: हमें यह बल सीसे के गोले पर लकड़ी के गोले की अपेक्षा अधिक समय तक लगाना पड़ेगा। हम यह कह सकते हैं कि सीसे के गोले की संहति लकड़ी के गोले की अपेक्षा अधिक है। चूँकि एक स्थिर बल की क्रिया के आधीन वेग, काल के समानुपाती बढ़ता है। इसलिये संहति, एक जड़ पिण्ड

को उस वेग तक त्वरित करने में लगने वाले समय का सम्बन्ध है। संहति, इस सम्बन्ध के समानुपाती है तथा गुणांक, त्वरित करने वाले बल पर निर्भर करता है।

बढ़ती हुई संहति

संहति किसी भी पिण्ड का सबसे महत्वपूर्ण गुण है। हम यह मानने के लिये अभ्यस्त हैं कि पिण्डों की संहति सदा स्थिर रहती है तथा वह वेग पर निर्भर नहीं करती। यह परिणाम हमारे प्रारम्भिक तर्क, से निकलता है कि एक स्थिर बल के सतत लगाने पर वेग बल-प्रयोग के काल के अनुलोमानुपाती (directly proportional) बढ़ता है।

यह तर्क वेगों के योग के नियम पर आधारित है। तथापि, हमने अभी अभी सिद्ध किया है कि यह नियम सब अवस्थाओं में लागू नहीं किया जा सकता।

एक बल को, मान लीजिये दो सेकण्डों तक लगाने के बाद प्राप्त चाल को ज्ञात करने के लिये हम क्या करते हैं? हम वेगों के योग के साधारण नियम का उपयोग करते हैं और प्रथम सेकण्ड के अन्त में पिण्ड की चाल को द्वितीय सेकण्ड में उसके द्वारा प्राप्त की गई चाल में जोड़ देते हैं।

हम ऐसा तभी तक कर सकते हैं जब तक वेग प्रकाश की चाल के निकट तक नहीं पहुँचते। उस अवस्था में पुराना नियम अपर्याप्त हो जाता है। आपेक्षिकता के सिद्धान्त के आधार पर वेगों को जोड़ने से हमें जो परिणाम प्राप्त होंगे, वे योग के पुराने नियम (जो इस दशा में बिलकुल व्यर्थ है) उपयोग करने से प्राप्त परिणाम से कुछ कम होंगे। इसका अर्थ यह हुआ कि अधिक वेग होने पर वेग में वृद्धि लगाये हुये बल के काल के समानूपाती नहीं रहती, बल्कि कुछ धीमी रहती है। यह स्वाभाविक ही है, क्योंकि एक सीमांत वेग का अस्तित्व है।

यदि पिण्ड पर एक स्थिर बल लगा हो तो पिण्ड का वेग धीमे-धीमे ही बढ़ पाता हैं जैसे-जैसे उसका वेग प्रकाश के वेग के निकट तक पहुँचता जाता है। लेकिन सीमांत वेग से अधिक कभी नहीं हो पाता।

संहति को पिण्ड के वेग से स्वतंत्र तभी तक माना जा सकता है, जब तक कि हम यह कहें कि पिण्ड का वेग, उस पर लगने वाले बल के काल के समानुपाती बढ़ रहा है। लेकिन जैसे ही वेग, प्रकाश के वेग के निकट पहुँचता है, काल और वेग के मध्य का अनुपात अदृश्य हो जाता है और संहति, वेग पर निर्भर करने लगती है। चूँकि त्वरण-काल अनन्त रूप से बढ़ जाता है और वेग सीमांत-सीमा से अधिक हो नहीं सकता, अतः यह स्पष्ट है कि संहति, वेग के साथ-साथ बढ़ने लगती है और पिण्ड का वेग, प्रकाश के वेग के तुल्य होने पर संहति अनन्त हो जाती है।

गणना से पता चलता है कि गतिशील पिण्ड की संहति उतना ही बढ़ती है, जितना कि उसकी लम्बाई घटती है। इस प्रकार २४०,००० कि० मी० प्रति सेकण्ड की चाल से गतिशील आइन्सटीन-रेलगाड़ी की संहति, उसी रेलगाड़ी की विराम-स्थिति में संहति की अपेक्षा १०/६ गुनी अधिक हो जाती है।

यह बिलकुल स्वाभाविक ही है कि प्रकाश के वेग की तुलना में नगण्य माने जाने वाले परम्परागत वेगों से व्यवहार करते समय, हम संहति परिवर्तन की उपेक्षा कर सकते हैं। यह ठीक वैसे ही है कि हम एक पिण्ड की विमिति और उसकी चाल के बीच के सम्बन्ध की उपेक्षा कर देते हैं, या दो घटनाओं के बीच का कालान्तर और इन घटनाओं के प्रेक्षकों के वेगों के मध्य सम्बन्ध की उपेक्षा कर देते हैं, यदि वेगों के मान बहुत कम हों।

हम संहति और वेग के बीच के सम्बन्ध, जिसकी उत्पत्ति आपेक्षिकता के सिद्धान्त से हुई, की जाँच तेज इलेक्ट्रॉनों (electrons) की गति का निरीक्षण करके कर सकते हैं।

आधुनिक प्रायोगिक साधनों में प्रकाश के वेग के निकट वाले ही किसी वेग से इलेक्ट्रॉनों को गतिशील करना बिलकुल सामान्य बात है। इलेक्ट्रॉनों को विशेष संस्थापनों (installations) में जो त्वरक (acceleration) कहलाते हैं, प्रकाश के वेग से केवल ३० कि० मी० प्रति सेकण्ड कम चाल तक त्वरित किया जाता है।

इसका परिणाम यह है कि आधुनिक भौतिक-विज्ञान बहुत तेज चाल से गतिशील इलेक्ट्रॉनों की संहति की तुलना स्थिर इलेक्ट्रॉनों की संहति से कर

सकने के योग्य है। प्रयोगों ने पूर्णतया पुष्टि कर दी है कि संहति, वेग से सम्बन्धित है – जो कि आपेक्षिकता के सिद्धान्त का एक उपप्रमेय है।

एक ग्राम प्रकाश का मूल्य क्या है ?

पिण्ड की संहति में वृद्धि का उस पर प्रयुक्त कार्य (work) से निकट सम्बन्ध है। यह उस बल के समानुपाती है, जो पिण्ड को गतिशील बनाने के लिए आवश्यक है। केवल पिण्ड को गतिशील बनाने के लिए कार्य को व्यय करने की आवश्यकता नहीं है। पिण्ड पर प्रयुक्त समस्त बल, पिण्ड की ऊर्जा में कोई वृद्धि, उसकी संहति को बढ़ा देते हैं। यही कारण है कि किसी पिण्ड की संहति ऊष्मा (heat) पाकर बढ़ जाती है; एक कमानी (spring) की संहति उनको संपीड़ित (Compress) करने पर अधिक हो जाती है। यह सच है कि संहति-परिवर्तन और ऊर्जा-परिवर्तन के मध्य समानुपात का गुणांक नगण्य है–एक पिण्ड की संहति में एक ग्राम की वृद्धि करने के लिए हमें २५,०००,००० कि० वाट-घण्टा ऊर्जा प्रयुक्त करना पड़ती है।

यही कारण है कि साधारण परिस्थितियों में पिण्ड के भार में परिवर्तन बिलकुल नगण्य रहता है और बहुत परिशुद्ध पैमानों से भी नापा नहीं जा सकता। इस प्रकार यदि हम एक टन पानी को ०° से. क्वथनांक (boiling point) तक गरम करें, तो उसकी संहति लगभग एक ग्राम का १/५००,००,०० भाग बढ़ती है।

यदि हम एक बन्द भट्टी में एक टन कोयला जलायें, तो दहन के द्वारा उत्पन्न पदार्थों की संहति, प्रारम्भ में लिये गये, कोयला और आक्सीजन की संहति से एक ग्राम का १/३००० भाग कम होगी। संहति की यह कमी, जलने की प्रक्रिया में उत्पन्न ऊष्मा के द्वारा लापता कर दी जाती है।

तथापि, आधुनिक भौतिक-विज्ञान में हम ऐसी परि-घटनाओं का निरीक्षण भी करते है, जहाँ संहति-परिवर्तन का प्रमुख महत्व रहता है।

उस परिघटना को ही लीजिये जो परमाणुओं के नाभिकों (nucleus) के टकराने और परिणामस्वरूप नये नाभिकों के उत्पन्न होने के समय घटित होती है। उदाहरणार्थ, जब लिथियम (lithium) का एक परिमाणु हाईड्रोजन के

एक परिमाणु से टकराता है और हीलियम के दो परमाणुओं को उत्पन्न करता है, तब संहति में परिवर्तन अपने प्रारम्भिन मान के १।४०० वें भाग के तुल्य होता है ।

हम पहिले ही कह चुके हैं कि किसी एक पिण्ड की संहति एक ग्राम बढ़ाने के लिये हमें २५०००००० किलो वाट-घण्टा शक्ति का प्रयोग करना पड़ता है । इसलिये एक ग्राम लिथियम और हाईड्रोजन को हीलियम में बदलने के लिये ४०० गुनी कम अर्थात् २५०००००० ÷ ४०० = ६०००० किलो वाट घण्टा ऊर्जा की आवश्यकता होगी ।

अब हम प्रयत्न करें और नीचे लिखे प्रश्न का उत्तर दें । भार की दृष्टि से प्रकृति में अस्तित्व रखने वाला कौन सा पदार्थ सबसे अधिक मूल्यवान है ?

रेडियम को सबसे अधिक बहुमूल्य माना जाता है । अभी हाल तक १ ग्राम रेडियम का मूल्य लगभग ५०००००० रुपया माना जाता था ।

लेकिन प्रकाश का मूल्य क्या होगा ?

एक विद्युत वल्व में हमें खर्च की हुई ऊर्जा का १।२० वां भाग प्रकाश के रूप में प्राप्त होता है । इसलिये, एक ग्राम प्रकाश २५०००००० किलो वाट-घण्टा कार्य के २० गुने अर्थात ५०००००००० किलो वाट-घन्टा के तुल्य है । इसका मूल्य १०००००००० रुपया होगा, यदि हम यह माने कि १ किलो वाट घण्टा की कीमत केवल २० पैसा है । परिणाम यह निकला कि एक ग्राम प्रकाश की कीमत १ ग्राम रेडियम की कीमत से २० गुनी है ।

●

उपसंहार

परिशुद्ध और बिलकुल निर्णयात्मक प्रयोगों के कारण हम इस बात को स्वीकार करने लगे हैं कि आपेक्षिकता का सिद्धान्त, जो कि हमारे चारों ओर फैले हुए विश्व के अत्यन्त अद्‌भुत लक्षणों को प्रकट करता है, सही है लेकिन ये लक्षण हमारी पहली सरसरी दृष्टि से देखने पर प्रकट नहीं होते हैं।

हमने देखा कि उन बुनियादी संकल्पनाओं में, जिन्हें मनुष्य ने शताब्दियों तक प्रतिदिन के अनुभव से बना पाया है, आपेक्षिकता के सिद्धान्त से दूरगामी तथा मौलिक परिवर्तन हुए हैं।

क्या इसका अर्थ यह है कि आपेक्षिकता के सिद्धान्त के प्रकट होने से बहुत पहिले भौतिक-विज्ञान ने जो विकास किया, उसे हम एक पुराने और अनुपयोगी जूते के समान जहाज पर से फेंक दें ?

यदि ऐसा ही होने लगे तो वैज्ञानिक अनुसंधान में उलझने को कोई तैयार नहीं होगा। कोई न कोई नया सिद्धान्त अवश्य प्रकट हो जायेगा और पुराने को कुचल देगा।

एक साधारण एक्सप्रेस गाड़ी में सवार एक यात्री की कल्पना कीजिये, जो अपनी घड़ी ठीक करता रहता है, क्योंकि आपेक्षिकता के सिद्धान्त के अनुसार वह स्टेशन की घड़ी से पीछे हो जायेगी। वह यात्री एक हँसी का पात्र बन जायेगा इससे वास्तव में इस दशा में समय का अन्तर एक सेकण्ड के अत्यन्त सूक्ष्म

भिन्न के बराबर ही हो पाता है और अत्यन्त परिशुद्ध घड़ी पर किसी झटके का प्रभाव इससे कहीं अधिक रहता है।

एक रासायनिक इन्जीनियर, जो यह शंका करता है कि क्या पानी की संहति गरम होने के बाद भी वही बनी हुई है, स्पष्टतया बुद्धि-भ्रष्ट माना जायेगा। इसके विपरीत वह भौतिक-विद्, जो टकराने वाले परमाणु नाभिकों के प्रयोग में उनके परमाणु-भार में परिवर्तन का लेखा नहीं रखता, अनभिज्ञ कहा जायेगा तथा उसे प्रयोगशाला छोड़ देने को कहना पड़ेगा ।

डिजाइन बनाने वालों ने भौतिक विज्ञान के पुराने नियमों के अनुसार ही अपने इन्जनों का विकास किया और उन्हीं नियमों के आधार पर आगे भी विकास करते रहेगें, क्योंकि यदि वे आपेक्षिकता के सिद्धान्त पर आधारित संशोधनों को समाविष्ट भी करें, तो इन सुधारों का प्रभाव उनकी मशीनों पर उससे भी कम होगा, जितना कि गतिपाल पहिये (Fly-wheel) पर एक सूक्ष्म जीवाणु के बैठ जाने से होता है। लेकिन तेज इलेक्ट्रॉनों से प्रयोग करने वाले भौतिक-विदों को यह ध्यान रखना चाहिए कि वेग के साथ-साथ उनकी संहति में भी परिवर्तन होता है।

आपेक्षिकता का सिद्धान्त पूर्व की संकल्पनाओं और विचारों का खण्डन नहीं करता, बल्कि उनका विस्तार करता है और वह सीमाएँ निर्धारित करता है, जिनके अन्दर पुरानी संकल्पनाओं को त्रुटि का खतरा न उठाते हुए, लागू किया जा सकता है। आपेक्षिकता के सिद्धान्त के जन्म से पूर्व भौतिक-विदों द्वारा खोजे गये प्रकृति के नियम बिलकुल भी खण्डित नहीं किये गये, केवल उनके प्रयोग को अब अधिक स्पष्ट रूप से निश्चित कर दिया है ।

आपेक्षिकता के सिद्धान्त पर आधारित भौतिक-विज्ञान, जिसे आपेक्षिक भौतिकी (Relativistic physics) के नाम से जाना जाता है, और प्राचीन भौतिक विज्ञान, जिसे चिर-प्रतिष्ठित भौतिकी (Classical physics) कहा जाता है, के मध्य सह-सम्बन्ध (Co-relation) लगभग वैसा ही है, जैसा कि उच्चतर भूगणित (Geodesy), जो पृथ्वी की गोलाई की गणना करता है, और

बुनियादी भूगणित, जो उसकी उपेक्षा करता है, के मध्य में उच्चतर भूगणित ऊर्ध्वाधर की आपेक्षिकता से आगे बढ़ती है, और आपेक्षिक भौतिकी पिण्ड की विमितियों की आपेक्षिकता का तथा किन्हीं दो घटनाओं के मध्य कालान्तर की आपेक्षिकता का ध्यान रखता है, जबकि चिर-प्रतिष्ठित भौतिकी में आपेक्षिकता की संकल्पना के विषय में कुछ भी विचार नहीं किया जाता है। जिस प्रकार उच्चतर भूगणित का विकास बुनियादी भूगणित से हुआ, उसी प्रकार आपेक्षिक भौतिकी को चिर-प्रतिष्ठित भौतिकी ने विकसित किया और विस्तृत किया।

हम गोलीय-ज्यामिति (गोलों के सतह की ज्यामिति) के सूत्रों से समतल ज्यामिति के सूत्रों में बदल सकते हैं। यदि हम पृथ्वी की त्रिज्या (radius) को अनन्त लम्बाई की मान लें। तव पृथ्वी एक गोला नहीं रहेगी, बल्कि एक अनन्त समतल हो जायेगी; ऊर्ध्वाधर निरपेक्ष हो जायेगा और किसी त्रिभुज में कोणों का योग दो समकोणों के बराबर हो जायेगा।

आपेक्षिक भौतिकी में भी ऐसा ही किया जा सकता है। यदि हम यह मान लें कि प्रकाश का वेग अनन्त रूप से बड़ा है, अर्थात, प्रकाश का संचार तात्क्षणिक है।

वास्तव में यदि प्रकाश का संचार तात्क्षणिक होता हो तो समक्षणिकता की संकल्पना, जैसा कि हम देख चुके हैं, निरपेक्ष हो जाता है। घटनाओं के मध्य कालान्तर और पिण्ड की विमितियाँ भी निरपेक्ष हो जाती हैं और उन फ्रेमों या प्रयोगशालाओं पर, जहाँ से कि उनका निरीक्षण किया गया है, निर्भर नहीं करतीं।

अत: हम समस्त चिर-प्रतिष्ठित संकल्पनाओं को अपरिवर्तित रख सकते हैं, यदि हम प्रकाश के वेग को अनन्त मान लें।

तथापि, प्रकाश के चरम वेग को आकाश तथा काल की प्राचीन संकल्पनाओं के साथ मिला देने का प्रयत्न हमको उस मनुष्य की भाँति बेतुकी स्थिति में लाकर रख देता है, जो यह जानता है कि पृथ्वी गोल है, लेकिन हठ

करता है कि उसके नगर की ऊर्ध्वाधर, एक निरपेक्ष ऊर्ध्वाधर है, और नगर की सीमाओं के बाहर इस डर से कदम नहीं रखता कि कहीं आकाश में न गिर पड़े।

चित्र २३

पारिभाषिक शब्दावली

अनुमान	= Inference
अनुलोमानुपात	= Direct proportion
अपकेन्द्री	= Centrifugal
अभिवचन	= Affirmation
आकाश	= Space
असंगति	= Inconsistency
आँकड़े	= Data
संकुचन	= Contraction
आपेक्षिक गति	= Relative velocity
आपेक्षिकता	= Relativity
आभासी	= Apparent
इलेक्ट्रोन	= Electron
उप प्रमेय	= Corollary
ऊर्जा	= Energy
ऊर्ध्वाधर	= Vertical
ऊष्मा	= Heat
कम्पन	= Vibration
कर्ण	= Hypotenuse
कल्पना	= Assumption

कार्य	= Work
काल	= Time
काल पश्चता	= Time-lag
किरणावली	= Beam of light
क्रिया	= Function
क्रियाशील होना	= Operate, act
खगोल विज्ञान	= Astronomy
गति	= Motion
गुण	= Property
गुणांक	= Coefficient
गुरुत्वबल	= Force of gravity
गोलीय ज्यामिति	= Spherical geometry
घर्षण	= Friction
घूर्णक गति	= Rotary motion
चरम वेग	= Top velocity
चाल	= Speed
चिर प्रतिष्ठित	= Classical
जड़	= Inertial
जड़ता	= Inertia
ज्यामितीय	= Geometrical
ज्योतिर्विद्	= Astronomer
ढाँचा, फ्रेम	= Frame
तकनीकी	= Technical
तरल	= Liquid
त्वरक	= Accelerator
त्वरण	= Acceleration
त्वरित	= Accelerate
तत्क्षणिक, तात्कालिक	= Instantaneous
तारकीय	= Stellar
तार प्रणाली	= Telegraphy

पारिभाषिक शब्दावली

तन्त्र	= Technique
दृष्य घटना (परि घटना)	= Phenomenon
दहन	= Combustion
नगण्य	= Insignificant
नाभिक	= nucleus
नियम	= Principle
निगमन	= Deduce
निरपेक्ष	= Absolute
निश्चित करना	= Define
निरास	= Elimination
निरीक्षण	= Observation
निर्वात स्थान	= Vacuum
नोदन करना	= Propel
पटरी	= Ruler
पदार्थ	= Matter
परवलय	= Parabola
परिघटना	= Phenomenon
पराध्वनिक	= Supersonic
परावर्तित	= Reflect
परिकल्पना	= Hypothesis
परिभ्रमण	= Rotation
परिमापित (निश्चित)	= Defined
परिशुद्धता	= Accuracy
प्रतिरोध	= Resistance
प्रयोग	= Experiment
प्रक्षेप-वक्र	= Trajectory
प्राकृतिक विज्ञान	= Natural science
पाठ्यांक	= Reading
पिण्ड	= Body
पुरःस्थापना	= Introduce

बल	= Force
भूगणित	= Geodesy
भूविज्ञान	= Geology
भौतिकविद्	= Physicist
भौतिकी	= Physics
मन्दन	= Deceleration
माध्यम	= Medium
माप	= Measurement
याम्योत्तरवृत्त	= Meridian
यांत्रिकी	= Mechanics
योगसूत्र	= Addition Formula
रूढ़	= Conventional
रेखांश	= Longitude
वक्र	= Curve
वृत्ताकार	= Circular
व्यवहार	= Practice
व्युत्पत्ति	= Derivation
विकीर्ण करना	= Radiate
विमितियाँ	= Dimensions
विराम-स्थिति	= State of rest
विस्थापन	= Displacement
वेग	= Velocity
स्नेप-शाट	= Snap-shot
समतल	= Plane, Flat
समद्विबाहु	= Isosceles
समबाहु	= Equilateral
समानगति	= Uniform motion
समान्तर	= Parallel
समानुपाती	= Proportionately
सरल रेखा में	= Rectilinearly

स्वचालित	= Automatic
सह-सम्बन्ध	= Correlation
सापेक्ष	= Relative
सापेक्षता (आपेक्षिकता)	= Relativity
सापेक्षवादित	= Relativistic
स्थिर	= Constant, Stationary
सिद्धान्त	= Principle, theory
श्रोत	= Source
सौरमण्डल	= Solar system
संकल्पना	= Notion, Conception
संकेत	= Signal
संगामी	= Concurrent
संचार	= propagation
संचारण	= Transmission
संचालन	= Conduct
संपीडित	= Compress
संहति	= Mass
त्रिज्या	= Radius

INDIAN INSTITUTE OF ADVANCED STUDY
Acc. No. 43687
Date 24.8.73
SIMLA

लम्बाई का संकुचन
गति की वक्रता
एक तारे तक की यात्रा
काल मशीन
संहति